

SHRI MURLIDHAR CHANDRA-KANT BHANDARE (Maharashtra): At least the outlines should have been given.

SHRI JAGESH DESAI: I do not know what is the policy.

SHRI VISHWANATH PRATAP SINGH: I am entirely in your hands.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI PAWAN KUMAR BANSAL): Well, we can do without the clarifications now. We can take it up later. Now we will continue with the discussion on the Education Policy.

SHRI M. S. GURUPADASWAMY (Karnataka): We have decided, as my hon. friend knows, in the Business Advisory Committee that there will be a debate on this, not in this session but in the next session.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI PAWAN KUMAR BANSAL): So now we continue with the discussion on the Education Policy. Before I call the next speaker, I request hon. Members again to be particular about time. Shri Sudhakar Pandey.

GOVERNMENT MOTION ON
"CHALLENGE OF EDUCATION—
A POLICY PERSPECTIVE"...contd.

श्री सुधाकर पाण्डेय (उत्तर प्रदेश) : उपसभाध्यक्ष जी, शिक्षा ने चुनौती विषयक परिचय-पत्र सारे देश में विचार-मंचन का विषय बना हुआ है और सीमांत है कि इस समय जो शिक्षामंत्री है, उन्होंने अपने जीवन का स्वर्णिम अंश शिक्षा के लिए लगाया है और आज भी शिक्षा में उनकी रुचि है। शिक्षा के लिये मानव-संसाधन विभाग की स्थापना की गयी है और उसके माध्यम से यह यत्न किया जा रहा है कि शिक्षा पुनः कालजो बने और इसके माध्यम से जीवन का भविष्य रचा जाए। साथ ही जो अन्तराल बढ़ता जा रहा है, जीवन में और विज्ञान में, उसको जोड़ा

जाय। इस पत्र में यह सारी बातें संकेत रूप में आ गयी हैं। इस पत्र में शिक्षा के संबंध में वे सारी बातें संकेत रूप में आ गई हैं जो आनी चाहिए। और बहुत सी चीजें नहीं हैं। शिक्षा की स्थिति वही है जैसे तुलसीदास ने कहा है — "हरिअनन्त हरि कथा अनन्ता," उसका अन्त नहीं है।

शिक्षा के बारे में अब हम कोई बात करें तो सबसे पहले हमें साधन की बात करनी चाहिए। इसके पहले भी बहुत से आयोग बने थे और उन आरोपों के माध्यम से बहुत से अच्छे-अच्छे सुझाव दिए गए थे, किन्तु उन सुझावों का अंश-अंश हमने लिया जिसका परिणाम यह हुआ कि उस बात की उपलब्धि नहीं हुई जिसकी उपलब्धि के लिए हम प्रयत्नशील थे। शिक्षा पर और खर्चा हो या न हो, किन्तु जितना खर्चा हो या जितने साधन जुटाने हैं उनकी स्पष्ट व्यवस्था होनी चाहिए और उसी के माध्यम में आगे बढ़ोत्तरी की जानी चाहिए।

शिक्षा की जब हम बात करते हैं और संसाधन मंत्रालय की बात करते हैं तो पहली बात यह मोचनी चाहिए कि हमारे भीतर कितना समन्वय है। शिक्षा को खंड-खंड देखने के हम आदी हो गए हैं, प्राइमरी शिक्षा को अलग देखते हैं, हाई स्कूल की शिक्षा को अलग देखते हैं, विश्वविद्यालय की शिक्षा को अलग देखते हैं, जिसका परिणाम यह हो रहा है कि इन तीनों में सामंजस्य नहीं हो रहा है। इसके साथ ही हम यह भी देखते हैं कि हमारे मंत्रालय में जितनी शिक्षा से सम्बन्धित चीजें हैं उनमें भी समन्वय नहीं हुआ है। अगर इधर ऐसा हुआ हो तो मैं नहीं जानता। मेरा ऐसा अनुभव है कि यू जी सी का कोई समन्वय एन सी आर टी से नहीं है, इतिहास परिषद का समन्वय दर्शन परिषद से नहीं है। इतना ही नहीं इस क्षेत्र में एक मंत्रालय का दूसरे मंत्रालय से किसी प्रकार का समन्वय नहीं है। अभी हमारे मित्र

ने कहा कि रेडियो-टेलीविजन पर कुछ दूसरा दिखाया जा रहा है और हम कुछ दूसरा चाहते हैं। सम्बन्ध को व्यापक व्यवस्था सरकार के भीतर और सरकार के संसाधनों के भीतर करनी होगी। एक तरफ आप चरित्र को रचना करेंगे और दूसरी तरफ चरित्र को समाज में गिनने को बाध करेंगे। केवल कला, साहित्य और संस्कृति के विभागों को मिलाने का बात नहीं करना होगा, बल्कि टेक्नालॉजी और साइंस के विभागों के साथ भी मिलान करने को बात करना होगा। यह सम्बन्ध का पक्ष भारत सरकार का, शिक्षा मंत्रालय का अब तक कमजोर रहा है जब तक इसको दृढ़ नहीं किया जाएगा तब तक यह काम आगामी में नहीं होगा।

शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध में सारी ऊंची बातें बड़ी जाती हैं और कहीं गई हैं जिसके सम्बन्ध में किसी को आति नहीं हो सकता वह हैं मंत्रिमान में वर्णित तथ्य—राष्ट्रियता, जनतंत्र, धर्म समभाव या धर्म समभाव और समाजवाद। आपको इसको परिभाषा करनी होगी अब तो यह समझा जा रहा है कि समाजवाद या राजनीति का अर्थ केवल चुनाव लड़ना और जैसे-तैसे चुनाव लड़कर जीतना है। उनके जो मूल तत्व हैं उनको भुला दिया गया है। इससे सरकार का अहिं हो सकता है, राजनीतिक दलों का भी अहिं हो सकता है। भारत कौन सा समाजवाद चाहता है, कौन सी धर्म निपेक्षता चाहता है, किस प्रकार का लोकतंत्र चाहता है और इनका जीवन से क्या सम्बन्ध है, इसको स्पष्ट रूप से शिक्षा के माध्यम से उद्घाटित, परिभाषित करना चाहिए और उसके लिए प्रयास करना चाहिए।

शिक्षा की जब बात आती है तो तुरन्त अध्यापक की बात आती है आपको रिपोर्ट में अध्यापकों के बारे में बहुत कम लिखा गया है। आपने एक कमीशन भी बनाया था शिक्षकों का। उसकी रिपोर्ट हम लोगों के सामने नहीं आई। हो सकता है उसने बहुत विस्तार से उस सम्बन्ध में बात की हो। अगर वे बातें हमारे सामने

गई होतीं तो निश्चित रूप से आपका दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता।

अभी हमारे एक मित्र कह रहे थे कि राजनीति को शिक्षा से अलग नहीं करना चाहिए। मैं भी यह मानता हूँ कि राजनीति शिक्षकों का भी विषय होना चाहिए। किन्तु जो राजनीति विश्वविद्यालयों के माध्यम से हो रही है और पोलिटिकल पार्टियों के जो दफ्तर विश्वविद्यालयों में खुल रहे हैं उनको नहीं होने देना चाहिए किसी भी हालत में, चाहे उनके लिए कुछ भी करना पड़े। आज हम देखते हैं कि सारे देश के विश्वविद्यालय इस दुष्चक्र में पड़ गये हैं। कुछ अच्छे शब्द हैं राजनीति में जैसे जनतंत्र, डेमोक्रेसी और उनके माध्यम से आज विश्वविद्यालय जिन स्थानों पर पहुंच गये हैं ऐसे स्थानों पर विश्वविद्यालय पहुंच गये हैं कि वह मनुष्य बनने के कारखाने नहीं रह गये हैं, वे ऐसे कीटाणु बनाने के कारखाने बन गये हैं जिन के कारण देश में प्रदूषण फैलता है जैसे गंगा के प्रदूषण को दूर किया जा रहा है उसी तरह से विश्वविद्यालयों के प्रदूषण को समाप्त किया जाना चाहिए। किसी को इस तरह का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए—प्रगर वह अध्यापक है तो उसे को यह अधिकार प्राप्त हो कि वह जो चाहे कर सकता है, या अगर वह छात्र है तो वह जो चाहे कर सकता है, सब को बर्ती करना होगा कि जो राष्ट्र चाहता है, जो भारत की मनीषा चाहता है। इस दृष्टि से भी शिक्षकों के कर्तव्य को निश्चित किया जाय। शिक्षकों को एकेडेमिक मामलों में पूरी स्वतंत्रता है। वह अपना मिलेबम बनाते हैं, अपना पठ्यक्रम बनाते हैं, अपने इंतहान लेते हैं, अपनी नियुक्तियां करते हैं, किन्तु जनता का धन उस पर खर्च होता है हम लिये उन की काम के परीक्षा का साधन जनता का कोई साधन होना चाहिए न कि और कोई।

अभी यूजीसी की चर्चा की गयी। वह विश्वविद्यालयों का नेतृत्व कर रहा है और माधुरी बेन साहू ने बहुत अच्छा काम किया है मैं जानता हूँ कि उन्होंने सब बिखरे कामों को किस तरह से समेट कर रखा है। शिक्षा मंत्रालय

[श्री सुधाकर पाण्डेय]

का यह सौभाग्य है कि वह कई चीजें ऐसी चलाता है कि जो रिसर्च से ले कर सारा काम करते हैं। यू जी सी और एन सी ई आर टी ऐसी संस्थाएँ हैं जो शिक्षा पर सारा काम करती हैं। किन्तु उन के पास छात्रों की या विद्यालयों की अपनी कोई निजी प्रयोगशाला नहीं है। वहाँ प्रोफेसर्स हैं, रीडर्स हैं, लेक्चरर्स हैं और रिसर्च स्कालर्स हैं लेकिन उनका रिसर्च मैदान में न हो कर लेबोरेटरी में होता है। उन का प्रयोग मैदानों में भी होना चाहिए, उन का प्रयोग लेबोरेटरी में ही न हो। लेबोरेटरी की निष्पत्ति को जीवन में भी उतराना चाहिए। उस के साथ संस्थाओं को जुटना चाहिए। (समय की घटी) मैं दो तीन मिनट और लूंगा।

मेरे एक मित्र कह रहे थे कि अगर हिन्दी को थोपा जाएगा तो खून की नदियाँ बहा दगा। शिक्षा की बहस पर ऐसी बेहूदी बातें करना मनुष्यता का अपमान करना और शिक्षा का अपमान करना है। खून की नदियाँ वह बहाते हैं जो खुवार होते हैं। अगर वह यह करते हैं तो मैं भी यह कह सकता हूँ अगर अंग्रेजी हम पर थोपी जाएगी तो हम खून की नदियाँ नहीं खून का महासागर बना देंगे यह क्या बदतमीजी है।

SHRI VALAMPURI JOHN (Tamil Nadu). Sir, he has totally misunderstood the point. He is totally wrong. He has never said that rivers of blood would flow. He only said that till the last drop of blood we will fight.

श्री कल्पनाथ राय : आप बैठिये।
आप बैठिये।

SHRI VALAMPURI JOHN: He has no right, no privilege, to misinform.

SHRI KALPNATH RAI: Please sit down. (Interruptions)

SHRI VALAMPURI JOHN: Who are you? You are nobody. Don't show your gesticulations, holding a threat to the people, here.

श्री सुधाकर पाण्डेय : आप जब बोल रहे थे तब तो मैं ने कुछ भी नहीं कहा और अगर शिक्षा यही मिखाती है तो यह संस्कृति आप को ही मुबारक हो।

परीक्षा में परिष्कार और सुधार परम आवश्यक है और यह भी परम आवश्यक है कि इस के साथ ही उसका मूल्यकित हो वह किसी सार्वजनिक माध्यम से हो। यह उन्हीं लोगों के माध्यम से नहीं होना चाहिए कि जो उस के भीतर जी खा रहे हैं, जिन की रोजी रोटी, उसके माध्यम से चल रही है। चाहे उस में भले ही बड़े से बड़े लोग हों, लेकिन उस बात की परवाह नहीं की जानी चाहिए।

रावसाहब तो प्राचीन को भी जानते हैं और नवीन को भी जानते हैं। आप की जितनी शिक्षा की संरचना और नव निर्माण के लिये समितियाँ बनती हैं उन में पुरातन के व्यक्ति नहीं लिये जाते हैं, पुरातन विचारधाराओं के और वह जिन्होंने इस देश को गुलाम प्रदान किया है, उस परम्परा के लोग उस में नहीं लिये जाते। जिसका परिणाम यह होता है कि प्राचीन और नवीन का कोई सम्पर्क नहीं होता है। हम अर्थशास्त्र पढ़ते हैं और रिसर्च भी करते हैं किन्तु हम यह मान कर चलते हैं कि टामस और कीन्स ही हमारे भाष्य विधाता हैं। इस देश में कोई चाणक्य भी हुआ या और उस की भी कोई व्य्थस्था है वह वह नहीं जानते। इस लिये पुरातन को नवीन के साथ चलाने के लिये आवश्यक है कि उस परिपाटी के विद्वानों को भी मौका स्थान-स्थान पर दिया जाना चाहिए देश में अंग्रेजी शिक्षा का माध्यम नहीं रह सकती। उसे परिवर्तित होना है। किन्तु दुर्भाग्य है कि भाषा की पहाई इतनी कमजोर हो गई है। इस देश में कि जिसकी आप परिकल्पना भी नहीं कर सकते। आज एम० ए० पास करके हिन्दी में भी कोई अर्जी नहीं लिख सकता, उर्दू में भी नहीं लिख सकता, अंग्रेजी में भी नहीं लिख सकता है। आपने आपन युनिवर्सिटी खोली है, मेरा आपसे आग्रह होगा कि देशी भाषा का आधार ही माध्यम

बन सकती है। देश, भाषा ही शिक्षा का माध्यम बन सकेगी उसके लिए आपन यूनिवर्सिटी की अलग परिकल्पना की गई है लेकिन यह ध्यान रखिए कि उसमें सचमुच विद्वान लोग आ सकें। जिस तरह से आपने यू० जी० सी० की स्थापना की है, उसी प्रकार स्कूलों के लिए भी आप एक कमीशन स्थापित कीजिए क्योंकि शिक्षा समवर्ती सूची में है। ताकि देश के स्कूलों को भी उसके माध्यम से नेतृत्व प्रदान किया जा सके। (समय की घंटी)

घंटी कई बार बज चुकी है, मैं आपका समय अधिक नहीं लूंगा मैं शिक्षा मंत्री जी को लिखकर भेज दूंगा। लेकिन मैं यह अवश्य कहना चाहता हूँ कि शिक्षा मनुष्य को मनुष्य बनाने की हो, कालेज या पाठशालाएँ अध्ययन करने जिसमें जा जाने वाली शिक्षा के माध्यम से हम भविष्य को जीत सकें और अपना अभ्युदय कर सकें और केवल मंगल ही नहीं, कल्याण भी उसके माध्यम से हम कर सकें। (अन्यवाद)

श्री बीरेन्द्र वर्मा (उत्तर प्रदेश) : उप-भाष्यकर्ता जी, राष्ट्र निर्माण, राष्ट्र के विकास और प्रगति के लिए शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है, इसे सभी स्वीकार करते हैं। राष्ट्र का भविष्य बच्चों पर है और बच्चों का भविष्य शिक्षा पर निर्भर करता है। हमारे देश की प्राथमिक शिक्षा का स्तर और माध्यमिक शिक्षा का स्तर और उपर की शिक्षा का स्तर दुर्भाग्य से गिरता जा रहा है। माननीय मंत्री जी और हम सभी यह स्वीकार करते हैं कि आजादी के 38 वर्षों में शिक्षा का प्रगार हुआ है, स्कूल-कालेज और यूनिवर्सिटीज बहुत बनी हैं और बढ़ी हैं, विद्यार्थियों की संख्या भी बहुत बढ़ी है। तब भी आजादी के 38 वर्षों में अभी तक केवल 38 प्रतिशत ही जनता शिक्षित हो सकी है। यह हमारी उपलब्धि बहुत कम है। लेकिन जितनी भी उपलब्धि है, दुर्भाग्य से हमारी शिक्षा का स्तर गिरा है और गिरता चला जा रहा है।

मान्यवर, आज जो हमारी प्राथमिक पाठशालाएँ हैं, उनमें भवन नहीं हैं, साज-सज्जा नहीं है, ब्लैक बोर्ड नहीं है। गांव के ही टीचर हैं, आस पास के पढ़ाने

वाले हैं वे आते नहीं, अधिकांश गैरहाजिर रहते हैं। मजबूर होकर जो सम्पन्न परिवार के आदमी हैं उन्होंने माटेसरी स्कूल गांव गांव में स्थापित किए हैं। तो अमीरों के बच्चों को पढ़ाने की तो व्यवस्था हुई है, लेकिन निर्धन बच्चों का क्या होगा यह देश निर्धनों का है, निर्धन बच्चों का है उनकी पढ़ाई ठप्प हो चुकी है। उसकी तरफ मैं आपका ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना चाहता हूँ। बताया गया है कि 70 फीसदी ड्राप-आउटस होते हैं। यह चैलेंज है हमारी सरकार को प्रदेशों की सरकारों को। इन ड्राप-आउट्स को किसी भी प्रकार से रोका जाए, हर हालत में समाप्त किया जाना चाहिए।

मान्यवर, स्कूल कालेज और विश्व-विद्यालयों से मुझे ऐसा लगता है कि खेल कूद और शारीरिक व्यायाम प्रायः समाप्त हो चुके हैं। जब देश गुलाम था तो उस जमाने में हिन्दुस्तान हाकी और कुश्ती में संसार में सबसे आगे था। अब हम वही भी संसार में अपना स्थान नहीं रखते। क्योंकि जहाँ स्कूल के पास मैदान है वहाँ कोई खेलने वाला नहीं और जहाँ मैदान नहीं वहाँ यह बहाना लगाया जाता है कि खेले कैसे। इसलिए इस तरफ ध्यान दिया जाना चाहिये अभी दो साल पेशतर दिल्ली में एशियाड हुये थे। हमने अपनी आँख से देखा कि जापान और चाइना, कोरिया और दूसरे देशों के 9वीं और दसवीं क्लास के लड़के और लड़कियाँ एशियाड में कम्पीट कर रहे थे। उन्होंने अपने देश के लिए सोने और चांदी के तमगे हासिल किये हमारे पढ़ने वाले विद्यार्थी वहीं के नहीं हैं। वे नौकरियों के लिए घूमते हैं। इसलिए मेरा कहना है कि आपको इस ओर भी ध्यान देना चाहिये।

मान्यवर, जहाँ शिक्षा की तरफ ध्यान नहीं दिया जाता, खेल-कूद की तरफ ध्यान नहीं दिया जाता वहाँ हमारे कालिजिज में, मुझे मंत्री महोदय माफ करेंगे, शराब बढ़ती जाती है। पश्चिमी सभ्यता तेजी के साथ बढ़ती जाती है। शराब और ड्रगबाजी जिसे नशाबंदी कहते हैं, उनकी

[श्री वीरेन्द्र वर्मा]

गोलियां हमारे विद्यार्थी बड़ी तेजी के साथ ग्रहण करते जाते हैं जिससे कि हमारी शिक्षा का स्तर गिरता जाता है।

शिक्षा के स्तर के साथ-साथ चरित्र की तरफ भी ध्यान दिया जाना चाहिये। अनुशासनहीनता भी बढ़ती जाती है। मेरी मंत्रा महोदय मे प्रार्थना है कि सबसे पेशतर सबसे अधिक ध्यान दे बच्चों के चरित्र निर्माण की तरफ। जिस देश के बच्चों के चरित्र का निर्माण होगा उस देश का आभाषण होगा, उस देश का भविष्य होगा। बच्चों में अनुशासन का पालन होगा, उनके स्वास्थ्य में भी वृद्धि होगी। उनके खेलकूद की तरफ भी ध्यान दिया जाना चाहिये।

नैतिक शिक्षा, मारेल एजुकेशन जिसे कहते हैं, मैं नया शब्द कहना हूँ स्प्रिचुअल एजुकेशन, मेरा कोई धार्मिक शिक्षा से मतलब नहीं है, लेकिन स्प्रिचुअल एजुकेशन की तरफ आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। विद्यार्थियों में देश प्रेम भरे, स्वदेशी प्रेम पैदा हो, इस तरह की व्यवस्था की कोशिश की जानी चाहिये। संसाधन मंत्री जो आप अनुभवों हैं और योग्य भी हैं। मुझे यह विश्वास है कि आपका देखरेख में हमारा शिक्षा का भविष्य सुन्दर बनेगा और आभाषण होगी। इस शिक्षा में आमूल-चूल परिवर्तन की बात, आज नहीं देश के पहले राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी ने, पहले प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू जी, लाल बहादूर शास्त्री जी यानी जितने भी राष्ट्रपति हुए, जितने भी प्रधान मंत्री हुए, सभी कहते चले आये कि शिक्षा में आमूल-चूल परिवर्तन किया जाये। मेरा जैसा आदमी यह सोचा करता था कि जब राष्ट्रपति कह रहे हैं, जब प्रधान मंत्री कह रहे हैं कि आमूल-चूल परिवर्तन होना चाहिये तो रोक क्यों रहा है इनको आमूल-चूल परिवर्तन करने के लिए। इसलिए प्रधान मंत्री जी ने आप जैसे अनुभवों वक्तों को इसका मंत्री बनाया है। मैं विश्वास करता हूँ कि आपका देखरेख में आमूल-चूल परिवर्तन

होगा शिक्षा के इस ढांचे में।

इसके अनिश्चित ओपन यूनिवर्सिटी यहाँ पर खुली है। बहुत अच्छा कदम है और मैं चाहता हूँ कि देश के हर प्रदेश में इस प्रकार की ओपन यूनिवर्सिटीज होनी चाहिये। 12वीं कक्षा से ऊपर मेलेक्टिव एजुकेशन के ऊपर आपको ध्यान देना चाहिये। 12वीं कक्षा से ऊपर व्यावसायिक शिक्षा पर भी आपको ध्यान देना चाहिए। व्यावहारिक शिक्षा पर भी अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये जिससे कि लोग ठोकरें खाते हुये रोजगार के लिए न घूमते रहें। मैं समझता हूँ कि आप इस तरफ भी ध्यान देंगे। 12वीं के बाद कालिजेज में, 13वीं कक्षा में जाने के लिए विद्यार्थियों को आमंत्रित करें जो सेक्ण्ड डिविजन प्राप्त किये हुये हैं, उसके अगले साल सहे सैनालीस फीसदी, उससे अगले साल 50 फीसदी और उसके बाद एम० ए० और पोस्ट ग्रेजुएट में जब जायें तो 50 फीसदी से अधिक अंक प्राप्त करने वाले होने चाहिए जिससे कि शिक्षा का स्तर नीचे न गिरे और लोगों को असन्तोष का मौका न मिले। जो ओपन यूनिवर्सिटी दिल्ली में कायम की है उसी आधार पर प्रदेशों में करेंगे तो वहाँ पर भी बच्चे उसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। 12वीं के बाद एंटीटयड टेस्ट आप रखिये। उसके बाद विद्यार्थियों को किस-किस दिशा में जाना चाहिये इस दिशा का आप मार्गदर्शन कर सकेंगे। यह उनके लिए बहुत अच्छा होगा। इस तरफ आप को ध्यान देना चाहिये। आज आप देखिए, टीचर साल भर में कितने घंटे पढ़ाते हैं। मैं अपने जाती अनुभव के आधार पर बताना चाहता हूँ कि साल भर में 365 दिनों में टीचर मुश्किल से 90 दिन ही पढ़ा पाता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि किस प्रकार की गजेटेड छुट्टियाँ होती हैं सरकारी कार्यालयों में छुट्टियाँ होती हैं उसी प्रकार से स्कूलों में छुट्टियाँ होनी चाहिये। पढ़ाई के घंटे बढ़ाये जाने चाहिये। लड़कों के लिए कोई न कोई सामाजिक सेवा होनी चाहिये जिसे वे छुट्टियों के अन्दर कोई सर्टिफिकेट के रूप में, प्रमाण-पत्र के रूप में प्राप्त करें। इनसे

यह लाभ होगा कि व सामाजिक कार्यों में छुट्टियों में जुट सकेंगे और श्रम को हमारे समाज में उचित स्थान प्राप्त हो सके, सम्मान प्राप्त हो सके, इसकी तरफ ध्यान दिया जाना चाहिये ।

जहां तक परीक्षाओं की बात है, जो मौजूदा परीक्षा प्रणाली है इसके अनुसार तो लड़के नम्र के आधार पर पास होते जाते हैं । आज स्थिति यह है कि शिक्षा खराब जा रही है । जो लड़के टीचर से ट्यूशन करते हैं उनका ठेका हो जाता है । टीचर स्कूलों में जो पढ़ाई की जानी चाहिये वह नहीं करते हैं । इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि आब्जेक्टिव टाइप के टेस्ट हर महीने में लिए जाने चाहिये और उम्र के आधार पर लड़कों को आगे बढ़ाया जाना चाहिये । स्कूलों और कॉलेजों के माध्यम जातीयता, साम्प्रदायिकता और प्रान्तीयता को समाप्त किया जाना चाहिये । आज सर्वत्र हमें इसका बोलबाला दिखाई देना है । यह हमारे लिए बड़े दुःख की बात है । जब हम लोग अपनी आजादी की लड़ाई लड़ रहे थे तो उस समय देश में इस प्रकार की जातीयता, साम्प्रदायिकता और प्रान्तीयता की भावना नहीं थी । आज आजादी के 38 सालों के बाद जातीयता और साम्प्रदायिकता बढ़ रही है । यह देश की एकता और अखंडता के लिए एक चुनौती है । शिक्षा के माध्यम से इसको दूर किया जाना चाहिये ।

मान्यवर! आपने माडल स्कूलों, आदर्श स्कूलों, का सुझाव दिया है । मैं हृदय से इसका स्वागत करता हूँ । मैं इस कारण से इसका स्वागत करता हूँ कि हिन्दुस्तान गांवों में रहता है । गरीब देशवासियों का यह अधिकार है कि उनको भी आदर्श शिक्षा मिले ।

[उपसभाध्यक्ष (श्री एम० पी० कोशिक)
पीठासीन हुये]

गांवों के अन्दर गांवों के लोगों ने अपने साधनों से स्कूल और कॉलेज स्थापित किये हैं । उनका सामान्य ज्ञान उनकी शिक्षा का स्तर, शहरों में रहने वाले

लड़कों के मुकाबले बहुत कम होता है इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि उन गरीब लड़कों को जो मैरिटोरियस भी हैं, लेकिन गरीबी होने के कारण उच्च शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं उनके लिए आपने जो यह आदर्श स्कूल, जिला स्तर पर खोलने का प्रस्ताव किया है, इसका मैं हृदय से स्वागत करता हूँ । शहरों में रहने वाले लोग उंची शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं । लेकिन जब तक आप गांवों में रहने वाले प्रतिभाशाली और मैरिटोरियस लड़कों को भी आगे आने का मौका नहीं देंगे तब तक भारत विकास नहीं कर सकता है । इसलिए आपने जो माडल स्कूल खोलने का विचार किया है इसका मैं समर्थन करता हूँ ।

श्रीमान्, मैं प्रांठ शिक्षा के संबंध में कुछ शब्द कहना चाहता हूँ । जब हमारा देश गुलाम था और हम लोग छोटे-छोटे स्कूलों में पढ़ते थे तो उस समय भी प्रांठ शिक्षा चलती थी । लेकिन आज यह प्रांठ शिक्षा फ्रीड शिक्षा हो गई है । देश में शिक्षा तो बढ़ा है । इस प्रांठ शिक्षा के अन्दर लोगों को गांवों में दस्तखत करने तो आ जाते हैं, लेकिन पूरा अधर ज्ञान नहीं हो पाता है । कभी-कभी ऐसा होता है कि उनसे किसी कागज पर दस्तखत करा लिये जाते हैं । और जब वे लोग कोर्ट में जाते हैं तो कहा जाता है कि तुम तो पढ़े-लिखे आदमी हो, दस्तखत करना जानते हो । इस प्रकार के इससे कारण मुकद्दमेबाजी बढ़ गई है । इसलिए मेरा सुझाव यह है कि आप लड़कों की शिक्षा की तरफ ध्यान दीजिए बच्चे और वच्चियों की शिक्षा की तरफ अधिक ध्यान दीजिए । आज आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं की शिक्षा की तरफ अधिक ध्यान दिया जाय । हमारे देश की शिक्षा का स्तर 38 फीसदी है, लेकिन महिलाओं और लड़कियों की शिक्षा का स्तर उससे भी कम है । प्राइमरी स्टेज पर भी लड़कियों के स्कूल अलग-अलग हैं उनके लिए लिए मास्टरनी नहीं मिलती हैं । इसका परिणाम यह होता है कि लड़कियां शिक्षा नहीं प्राप्त कर पाती हैं । इसलिए मेरा सुझाव है कि प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर

[श्री वीरन्द्र वर्मा]

को-एजुकेशन होनी चाहिये । लेकिन लड़कियों के लिए आठवी कक्षा से दसवी कक्षा तक के लिए कन्या पाठशालाएं खोलें। हर ब्लाक के ऊपर एक लड़कियों 3 P.M. का हाई स्कूल भी बने और माध्यमर जितने भी आपके प्रदेशों के पिछड़े इलाके हैं, जो प्रदेश के सबसे गरीब इलाके हैं उनमें आप माध्यमिक स्कूल स्थापित करें ।

[असमापित पाठायन हुई]

सरकार की तरफ से माध्यमिक स्कूल स्थापित हों, यह भी मेरा एक सुझाव है । इसके अलावा माध्यमर, दो प्रकार के स्कूल हैं । पब्लिक स्कूल और सरकारी स्कूल । पब्लिक स्कूल के लड़के तो नौकरियों में जाते हैं लेकिन सरकारी और हमारे पाइवेट स्कूलों के लड़के ठोकर खाते फिरते हैं । मेरा यह सुझाव है कि अगर आप पब्लिक स्कूलों को बन्द न करवा सकें तो पब्लिक स्कूलों में 50 फीसदी लड़के जो गरीब प्रतिभाशाली विद्यार्थी हैं, जो मेरीटोरियस स्टेंडन्ट्स हैं, गांव के हैं या दूसरे हैं, उन लड़कों को भी एजुकेशन हम पब्लिक स्कूलों में दिलवा दें तो इससे हमारे दोनों पपज सर्व होंगे । आपसे यह निवेदन जरूर करूंगा कि यह समझते हुए कि अगर एक लड़के को नालीम दी जाती है तो एक ही लड़के को शिक्षा दी जाती है, लेकिन अगर एक लड़की को शिक्षा दी जाती है तो एक परिवार पढ़ता है । इसलिये मेरा निवेदन है कि आपका ध्यान विशेषकर लड़कियों की एजुकेशन की तरफ होना चाहिए । लड़कियों के स्कूल गांवों में नहीं हैं, वहां केवल लड़कों के स्कूल हैं । शहरों में लड़कियों के स्कूल अवश्य हैं लेकिन शहरों में रहने के लिये लड़कियों के लिये कोई स्थान नहीं है । इसलिये माध्यमर, मेरा यह भी सुझाव है कि आप हर जिले के हैडक्वार्टर पर गांव की लड़कियों के लिये होस्टल स्थापित करवायें ताकि वे शहरों में शिक्षा प्राप्त कर सकें और वहां उनके रहने की व्यवस्था हो

सके । [जहां तक लड़कियों को शिक्षा देने की बात है उनको खाना बनाता, कपड़ा सिलता, टाइपिंग, होम साइंस और दूसरी प्रकार की व्यावसायिक शिक्षा देने की व्यवस्था की जानी चाहिए । मैं उम्मीद करता हूं इसमें हमारा यह देश आगे बढ़ेगा ।

एक और बात कहकर माध्यमर, मैं समाप्त करता हूं । माध्यमर, गांव के लड़के जिनका सामान्य ज्ञान बहुत ही कम है वे कम्पीटीटिव एजामिनेशन में कपीट नहीं कर पाते हैं । इसके लिये मेरा भाव सुझाव यह है कि जितने भी देशभर की आपकी यूनिवर्सिटी हैं, हर यूनिवर्सिटी में जो प्रतिभाशाली विद्यार्थी हैं, गरीब हैं, गांव के रहने वाले हैं, उनके लिये कोचिंग की व्यवस्था अगर आप करा दें तो एक बहुत बड़ा कल्याण का कार्य आप करेंगे, गांवों का भी और गरीबों का भी और शिक्षा का भी जिसकी पूरी जिम्मेदारी आपके ऊपर है । मुझे विश्वास है कि आप के कंधों पर यह जो बोझ आया है, उसे उसी सफलता के साथ पूरा करेंगे जैसे कि आपने पिछले कार्यों को सम्पन्न किया है । मुझे पूर्ण आशा है कि उसी सफलता के साथ आपको इस कार्य में भी सफलता प्राप्त होगी ।

SHRI MURLIDHAR CHANDRA-KANT BHANDARE (Maharashtra):
Madam Deputy Chairman, I rise to participate in what I consider as the most important debate not only of this session but perhaps of the few years to come in our country. Only day before yesterday, we had a debate on the Seventh Five-Year Plan and I noticed the contrast between that debate and this debate. In that debate every Member complained that the Seventh Five-Year Plan had been finalised and the Members were left with *fait accompli*. Here, for a change, you find that nothing is finalised and, therefore, we can participate today in the debate, contribute our ideas with a hope and almost a conviction that this idea in some

small measure will go in the ultimate formulation of the educational policy.

Now, when one looks at this document, one finds that it really highlights the failures. One searches and, I must say, almost in vain for the perspective or the policy; though the broad contours are there, the details are not there. And, therefore, I am grateful to the hon. Minister for Human Resource Development to give us this opportunity of filling in the various details of the policy that may eventually emerge. Before I come to the policy as such, let me deal with some of the basic things which affect our country. I think our country will always stand on the four pillars of—

(a) stability; (b) education; (c) development; and (d) peace. We are happy that by solving the problems of Punjab and Assam by yielding our power in favour of democracy, we have ushered in stability. But if stability is to be there at all times, of all these four pillars, the focal point is education because without education, the development will be lopsided; there will always be instability and even peace will be threatened. Therefore, education is the kingpin of all these pillars. And when we have this new department of human resources, we could not have chosen an abler and a finer person than the hon. Minister for Human Resource Development. I ask to myself, what are these human resources. If I may, with all humility, sum it up, human resources mean to develop the will of a citizen of this country to be a good citizen. Therefore, he participates in education; he participates in sports; he participates in culture; he participates in secular activities; he participates in national integration and he becomes an ideal citizen, where we are trying to synthesise... I do not know to what extent I will come to that but I do not know how much time I have got the modern man with ancient values.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Ten minutes.

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: No, we have got 4 hours and 20 minutes; I checked up.

THE DEPUTY CHAIRMAN: No, it is ten minutes for you.

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: All right, we settle for 15 minutes.

THE DEPUTY CHAIRMAN: No.

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: You are doing injustice to me; or I sit down if you are doing injustice.

THE DEPUTY CHAIRMAN: You are not listening. Let me tell you. When the Minister for Parliamentary Affairs Mr. Kesri gave an assurance to the Opposition that he is going to cut down the time of the Congress Party, it was decided...

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: But I will try to be very fast.

THE DEPUTY CHAIRMAN: You can increase the speed.

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: I feel that human resources means developing the will of the people to be a good citizen, if not the ideal one, and I must express the disappointment which I personally had when after the attainment of independence some of us at least felt that those leaders who got us the independence should have given us the call to build our nation. Instead of that we were asked to go back to schools. I was in school, just getting into the college, and a system of education which was really meant to serve the masters, which was meant to make us slaves of the British Empire, was continued and perpetuated with this present consequence that when we talk of Swadeshi we are the victims of ghulami. Therefore, I think some thing will have to be done, not merely what has been stated, but something will have to be done to change the entire character of education

[Shri Murlidhar Chandrakant Bhandare]

which is given to the students. For example, we learn Indian history but we do not learn about India. Efforts will have to be made by the hon. Minister in that direction. But this is only one side of the picture. Look at the other side. When we attained independence, we were 330 million. Today we have 330 million literates in the country which is larger than the total population of UK USA and Canada put together. And yet we are far away from fulfilling the mandate of article 45 about universalisation of elementary education. As a Member of this august House, after having taken the oath to uphold the Constitution. What I want is that the Constitutional guarantee, the assurance in the Constitution, the mandate of the Constitution should be fulfilled. Though it appears in the Chapter on Directive Principles I think, the right to education is the basic right and without this right, all other rights, enshrined either in article 19 or in any other part of the Constitution, are meaning less. Though this right cannot be enforced in a court of law, I am quite sure that the Government is keen on fulfilling its obligation.

Now, I come to the important question, how do we fulfil this obligation? In the matter of elementary education, there are four things which are important. One is access. It is now an accepted that one kilometre distance is what you should have. The second is, enrolment. The third is, retention, because the drop-out rate is more. The fourth is, progress. Now, in spite of the fact that it is 92 per cent, schools within one km. what one finds is that in as many as two lakh habitations, there are no schools at all. Therefore, what is required to be done is in all such habitations, schools should be opened. Whatever may be the population, 300 residents or 500 residents, no habitation should go without a school, an elementary school.

This is the first suggestion I want to make.

If we have to achieve universalisation, what should we do? The document mentions that over 50 million more children will have to be enrolled. In the Sixth Five-Year Plan, we provided for eighteen million. Thirty-two million have joined. This is a target very very difficult to be achieved, but I am quite sure, we will be able to provide the thrust provided we keep these four factors, namely, access, enrolment, retention and progress, in mind.

So far as retention is concerned, the main causes of drop-outs are: poor school facilities—over two lakh schools have no blackboard—unrelated curriculum, poor methods of teaching and lastly, poverty. Now, out of these four things, three are in the hands of the hon. Minister, namely, poor school facilities, unrelated curriculum and poor methods of teaching. I think, something should be done immediately to improve these. There is one more suggestion in this regard which I have to make and I am sure the hon. Minister will take note of this suggestion. I read somewhere that the maximum number of repeaters is in the first standard. Now, this is amazing; it is almost shocking. According to me, in the case of elementary education, from first to fifth standard, the promotion should be automatic. There should be no failures at all. (Interruption) Automatically, up to the fifth standard...

SHRI P. V. NARASIMHA RAO:
There is no examination.

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: If it is so, I am glad about it. The point which I want to make is—all efforts should be to make a number of suggestions. If made in this regard—majority of schools are one-teacher schools. What should be done about it? I am going to make a number of suggestions. It

I will give my suggestions one by one. The question is, how can one teacher manage five classes? How will the students be controlled? How will the students go there? The figures give here speak for themselves. Therefore, something should be done immediately to see that the teacher pupil ratio is immediately increased. Since there is not much of time, let me give, one by one, the suggestions which I want to make.

Firstly, how do you involve the community? Unless you involve the community, it is not possible to do anything. We have 432 districts and we have 750 Members of Parliament. Below the Members of Parliament we have the legislators. Then we have the corporators, the zila parishads and then the panchayats. You have got a whole army of public men. Why not assign this task to them? The Congress(I) Party have asked us to fill up a proforma of what we do. Let there be one definite heading as to how every Member of Parliament has contributed towards growth of elementary education, removal of illiteracy and also for adult education in this country.

The second thing which I want to say is, which I did in Bombay, we had a cooperative school. We still have it, but I am no longer the president of the school because I do not live in Bombay that often. This school is known as Maratha school and I would like the Hon. Minister to visit this school one of these days. This school caters to the children of class IV employees in Bombay. Although there are difficulties to run the school because of the conditions, the standards of the working Sundays or proper meals at home yet with all that the results are really satisfactory. I think in order to take the burden of the Government why don't we initiate cooperative schools. Between parents and teachers....

THE DEPUTY CHAIRMAN: I have already given you more time. (Interruptions). What can I do? I am short of time.

SHRI MURLIDHAR CHANDRA-KANT BHANDARE: Just one or two points. I am talking for you, for female education.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I am already educated.

SHRI MURLIDHAR CHANDRA-KANT BHANDARE: That is the difficulty. I have been working on this for the last seven days to give some ideas.

THE DEPUTY CHAIRMAN: It is not my fault.

SHRI MURLIDHAR CHANDRA-KANT BHANDARE: I think it should have come in the first week itself. Anyway, let me complete. For female education change the attitudes. Today what is happening? Look at the LIC advertisements, "For your son education policy", "for your daughter marriage policy". Now these are the attitudes which must be changed. I know you will give free uniform or free meals, but that is not enough. I have repeatedly said in the context of family planning, population control, that you must pay a stipend of Rs. 10 per female student who goes to the school and completes her education. You must give it to the weaker sections. Unless that incentive is there, it is not possible to improve the conditions. Unless the females are educated, there is going to be a bigger and bigger load on our population because it is only education which brings down the birth rate as has been proved in all the studies which have so far been done.

THE MINISTER OF STATE IN THE DEPARTMENTS OF EDUCATION AND CULTURE (SHRIMATI SUSHILA ROHATGI): But the initiative should come from men.

THE DEPUTY CHAIRMAN: He is a man.

SHRI MURLIDHAR CHANDRA-KANT BHANDARE: And do not treat a daughter as *Paraya dhan*.

[Shri Murlidhar Chandrakant Bhandare]

Please discourage lavish spending on marriages because on one day itself the whole price is to be paid on marriage.

There are many other points which I have to mention.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Better, you write them down and send them to the Minister.

SHRI MURLIDHAR CHANDRAKANT BHANDARE: When you came I know that my time was over. Anyway, since this is a matter of great importance, all I can say is, let this Parliament let all the MPs here, both the Ministers here, pledge that we will fulfil the mandate of article 45 of the Constitution, that we will give to our children the basic and the most fundamental of the human rights and that is the right of education.

THE DEPUTY CHAIRMAN: The Chair should also pledge that. Yes, Mr. Jaswant Singh.

SHRI JASWANT SINGH (Rajasthan): Madam Deputy Chairman, I am faced with three difficulties. First is the time. There is not enough time. The allotted time that I have is....

THE DEPUTY CHAIRMAN: Eleven minutes.

SHRI JASWANT SINGH: I don't think in 11 minutes I can do justice to the subject of an Approach Paper to Education, or a paper which attempts to search for a new education policy.

My second difficulty is that I do not wish to repeat... Thank you. My silence has brought about the silence which I thought was necessary. I do not wish to repeat those points which earlier speakers have already spoken of.

My third difficulty, which is the substantial difficulty that I face, is that, as the Minister himself has stated in the introduction to this policy perspective, this is not a statement of policy—and that is obvious enough—it is not a statement of policy—and that is obvious enough—it is not a statement of policy but it does provide a kind of basis for debate. The debate would perhaps have been more pointed, more meaningful and the debate would have been more directed if we had got the outline of a policy. This is not an observation on any individual who might have contributed to the drafting of it, but in the absence of an outline, of where the Government is attempting to go or the direction in which the new policy is to be created, all this does tend to become platitudinous and it prevents us from tackling the real issue. Our task, therefore, in this very short time that I have, is to pose the issues and to attempt to ferret out some of the proposals which we can perhaps take up for action. I would like to start with two questions. Madam.

The first is, have we got in this document separate, workable proposals or mere wishes, hopes and dreams? It is not a task that I can undertake in two or three minutes. This is the first question I asked myself when wanting to participate in this discussion. The second question was the question posed by a very eminent Indian who, in a seminar held on this very paper, termed this document as a "document of subversion." And when I heard that coming from as eminent as Indian as he is—I participated for a while in that seminar—I sought time from that eminent person... You are enquiring silently who he is. He is Mr. P. N. Haksar. If Mr. P. N. Haksar, a person who had been involved in the governance of this country for almost a decade, found it fit to call this document a "document of subversion", I thought I should impose on his goodwill and time to attempt to learn why he felt it to be so. I

would urge the Government to head his words and try and understand why he found it necessary to say so. I do not want to repeat what he said. I shall therefore go on to what I feel are the main issues which we see as confronting us today when we consider a question as important as education. And I am struck by the thought of my own limitations when attempting to put across something in the form of main issues. I am not, Madam Deputy Chairman, an educationist. I am also not a formally educated man. I certainly do try and learn and therefore whatever I have to say must be taken by the hon. Minister as the impressions of an ordinary Indian.

A number of speakers have earlier spoken of the same thing, have particularised it, have highlighted and pinpointed it. The primary issue in our education is about equity versus elitism. You can put it in many ways but I have not the time to elaborate on the whole theme of equity versions elitism. I would just say two or three sentences. Please reflect on the thought that when using this almost near national cliché now, that the country is to move into the 21st century, that we must plan for the 21st century, if Newton's laws are to continue to prevail and the earth is to continue to go round the sun, then, willy-nilly, without or with our efforts the 21st century will arrive, and when that 21st century arrives—I would leave it for reflection of the honourable Minister—in that 21st century half the world's illiterates will be from India. It is a staggering statistic that in that 21st century, which you are talking of as a national cliché half the world's illiterates will be from India, and it is a thought which should be uppermost in our minds when reflecting on a new education policy or even an approach to education. It is a part of all this equity versus elitism.

A number of speakers have spoken of the drop out rate being 77 per cent, 23 per cent only reaching class eight. But an aspect of it is that the drop-out rate is that high in primary where the poor are getting educated. It is much lower in the higher secondary or secondary and as you keep on going up the education ladder, this creates within itself a situation that the poor continue to have greater and greater illiteracy and the rich have a declining curve of that. Higher education gets monopolized by the rich and the poor get deprived even of primary education.

The third point is that our education is both elitist and poor in quality. Now this is a strange phenomenon which we face in our country that education is both elitist and is also poor in quality. I haven't the time to elaborate that, but I would like to leave yet another thought with the honourable Minister that that brings about in its wake negative associations, and because of those negative associations, you have cries, you have demands, that wherever there is quality in education in India, that must be levelled down. Therefore, please reflect that when there is a cry for quality education in the country to be levelled down, it is on account of the fact that our education is both elitist and poor in quality.

The next major issue is about social relevance and individual interest. Now I really don't have time to elaborate about social relevance and individual interest. Madam, will you please give me two or three minutes?

THE DEPUTY CHAIRMAN: You still have two minutes.

SHRI P. V. NARASIMHA RAO: Why don't you write to me? I am so keenly interested in having your views for my benefit that you could kindly write to me. It is true that we

[Shri P. V. Narasimha Rao]

have the constraint of time. Even if two minutes are given additionally, that is not going to really help you or help me. So, I welcome your comments, your views if you send them to me in writing.

SHRI JASWANT SINGH: I will do that. I will send them to you, Mr. Minister. But here I will quickly run through the points. I now go on to social relevance and individual interest. . . . (Interruptions) . . . Can I wait until the honourable Minister of State has finished his monitoring duties?

THE DEPUTY CHAIRMAN: You go on.

SHRI JASWANT SINGH: The third major issue, I feel, is the question of autonomy versus control and I put it to the honourable Minister, Madam Deputy Chairman, that the inter-connection between the educational, the political and the administrative is so close that you cannot have a political system which, while voicing the urge for decentralization is, in fact, the most centralized system any supposedly democratic set-up in the world could possibly have. This is not an occasion to indulge in party polemics, but the reality of the political situation obtaining in the country is as well known to you as it is to me. This political centralisation is so severe that you cannot at the same time continue to have that political centralisation and then simultaneously talk of decentralisation, whether it is in economic terms or in educational terms or in social terms. This is a theme needing greater elaboration. They talk of autonomy of universities or the University Grants Commission, of the role of Vice-Chancellors and Governors. When Governors are appointed, those who are to be put on political pasturage as a part of quanges, as continuing political patronage, it is an extension of centralisation. If the very nuclear core of your thinking is cen-

tralised, you cannot decentralise education.

Madam, the document recognises all that the critics of the Government and the education policy have been saying for the past 38 years. I do wish to mention very briefly, if somewhat inexactly, about the Kothari Commission which went through its labours between 1964 and 1966 and then produced a report in 1968. In that report Mr. Kothari had said, "The report of the Commission is not a substitute for action. A report which is shelved or does not lead to action is worse than no report because it leads to frustration of arousing hopes that remain unfulfilled." The whole story of our educational quest in independent India is all that.

Just a brief word about value systems, very briefly, Madam. The word "education" is Latin derivate. It is derived from the Latin word "educio" meaning "I lead out." Pleased reflect on the schism that we create within our own thinking when we use the word "education", a Latin derivate of "educio" and our guru-shishya param para.

एक शिक्षक है, एक गुरु हैं। यह शिक्षा की परंपरा है। एजुकेशन और शिक्षा की परंपरा। इस गुरु शिष्य की परंपरा में हम कहाँ तालमेल बिठायेगे दहे आज की सब से बड़ी चुनौती है

We use the word "education." Our sanskar, our swabhav, is based on our guru-shishya parampara. Unless we dissolve that structure that was cast on our society by Macaulay or whosoever, we are not going to make any substantial difference.

I have a very serious objection to some very curious phraseology used in this document. Talking about value system, a phrase is used, "operationally-viable value system." I am really intrigued about what an 'operationally-viable value system' is. Just behind the chair on which you sit, Madam,

there is an Ashok Chakra on which is written, "Satyameva jayate." We all know the historically proven fact that satya has never triumphed. Historically it has been established that truth has never triumphed. Occidentals modified it, and they say, "Honesty is the best policy." 'Truth has become honesty.' 'Jayate has become policy. Therefore, it is a part of what I am saying about the structure.

SHRI P. V. NARASIMHA RAO: Is it not operationally viable?

SHRI JASWANT SINGH: This is operationally viable. It is a quest for somebody whom you are leading out, as a quest for education, as a value system. Otherwise, it may be nothing else but satya-meve jayate. Therefore, when you talk of an operationally-viable value system in an approach paper to education, I am really thrown into a very great confusion.

THE DEPUTY CHAIRMAN: You conclude now.

SHRI JASWANT SINGH: I am concluding. Just one or two very brief proposals.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Four minutes more?

SHR JASWANT SINGH: No. Just two minutes or possibly even a minute.

Please get a firm commitment in terms of allocation of funds because, I think, to say that because we do not have resources, we do not have education, is a perversity. That is what perhaps motivated Mr. Haksar to say what he says in such anguished words. Now, there were Rs. 1500 crores allocation or whatever allocation is, but your Ministry is also loaded with 103 or 105 Departments. There you might have a large sounding sum of money, but it is spread over very thinly.

SHRI P. V. NARASIMHA RAO: Not at all large sounding. Even the sounding is not large.

SHRI JASWANT SINGH: Anyway, then consider a national educational authority or some such organisation or some think-tank on education. Please avoid technological enslavement. Please be aware of the new imperialism of blind modernisation. I do not have time. Madam, you have been most considerate to give me more time than I should have had.

I am grateful to the hon. Minister for having asked me to put my thoughts in writing and send it to him. Thank you.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I am going to be very unpopular because I gave you a little more time.

SHRI ANAND SHARMA (Himachal Pradesh): Madam Deputy Chairman, I rise to participate in what everybody agrees is the most important debate of this session. This subject not only relates to the younger generation but the future generation of the country also. It is unfortunate that when we are discussing this subject in detail and are planning for the 21st century, we have hardly any sufficient time to put forth our views. I wish more time had been allotted for this subject in order to discuss the failures in the past four decades; and how we have failed miserably in providing the necessary infrastructure of education to our people. However, I congratulate the Prime Minister and the Minister of Human Resources Development for the bold initiative and the ruthless dissection of the past failures and setting the correct objectives and goals before all of us.

Now, we all agree that education is good for our economic development. In the past we have failed to synchronise educational planning and economic planning and the result is before us. Education is also good for social

[Shri Anand Sharma]

transformation and an instrument of character development. It also provides us with scientific, managerial, technical and leadership skills.

If we look at the achievements since independence, in spite of the increase in the number of schools, the number of illiterates is increasing. By 2000 A.D. we will have 500 million illiterate people as against 437 million in 1981.

Madam, our leaders had a vision of India; and that was the vision of the great nation which has developed and is self-reliant. Today, we are trying to recapture that vision which is clear from the statements of the Prime Minister and the Government.

I need not go into the aims of 1968 policy of the education. But if it was meant to be more closer to the life and to provide expanded educational opportunities, we have failed to achieve that. Why we have failed? We have failed because there was a big gap between the developmental planning and the economic planning.

If we look at the college of education which we have irrespective of the fact whether we have the necessary facilities or not, it is sub-standard. And not only that, the teachers, too are not equipped for the present-day requirements. When we are planning for the future we also have to ensure that the teachers, too, are given the necessary training and that educational research is also updated. We have seen that we are using even for teaching the obsolete methods, the obsolete machinery. And we are preparing ourselves for a high leap in the field of technology, high technology industries and electronics. We have to ensure that the educational research is not imitative. It should be innovative. So far we have been imitating from others. And that

is why we always talk that we should have the latest technology and we must import it. If we update educational research, I think we can in future meet the situation and meet the challenges of the coming times

This document has laudable objectives, and there is a remarkable improvement, a clear improvement, over the 1968 policy document. It recognises for the first time wholism, and there is emphasis on multi-disciplinary courses, integrating agriculture, home industries and forestry. It recognises the need to change the present annual system of examination and to enlarge the open school system and to establish a uniform core curriculum. Now how are these objectives to be achieved? It is time that this problem is tackled in an urgent manner. Planning is important, but equally important is the implementation.

We are talking of vocationalisation of education and non-formal education. About vocationalisation, there is much that we can discuss. In the past also, we have given, may be to a limited extent, some technical training, some vocational training to our people. Ever since independence we have been doing that. But what is essential today is that there should be an assessment of the aptitude of the students. There is a debate—and even this document is not clear about it—as to at which level, higher secondary school level, middle school level primary school level, we should have that assessment of aptitude. I personally feel that we should have that assessment at the middle school level so that only those who have the necessary aptitude or the desire, or are fit enough, are sent for higher education and others are sent for vocational education. But vocational education too is not an end in itself. It may not solve the problem of unemployment which we discussed the other day during the debate on the Seventh Five Year Plan, because vocational education, if it is given only in one discipline, may not suffice. Vo-

cational education must ensure generation of employment and it is directly linked to economic growth. It should be made in such a manner that it provides employment both to the rural youth and to the urban youth. (Time-bell) Everything is already disturbed. We were told that we have very little time. I would request you to give me some more time.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I sent a note to that effect.

SHRI ANAND SHARMA: I wish we were told in time. Then we would not have given our names to speak.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I feel bad about it.

SHRI ANAND SHARMA: Whatever we want to discuss, we cannot elaborate. That is the main thing.

SHRI RAMCHANDRA BHARADWAJ (Bihar): Madam, I withdraw my name. You can give my time to him.

SHRI ANAND SHARMA: I thank Mr. Bharadwaj for being so kind.

Now, coming back to vocationalisation, it is also essential that there is an assessment of manpower requirement vocation-wise. There are vocations which may appear to be the correct ones for training today. But after a few years they may face a slump. If there is multi-vocational training, if the emphasis is laid on giving training in more than one field, then I think it will be the right thing to do and to a large extent we will be in a position to meet the problem of rural as well as unemployment in the country. I do hope that there will be increase in the number of ITIs, in the number of Regional Engineering Colleges and in the number of IITs. All of them have their own role to play which we need not define. But the number of these technical training institutes is very limited. And unless and until we ensure that not only is there

an increase in their number, there is also quality in training, we may, after having a review, again say that we have failed in achieving what we have tried to achieve.

[The Vice-Chairman (Shri Santosh Kumar Sahu) in the Chair]

There is also a mention of character building and moral education. Some friends have also made a mention of it. How is this going to be done? Is the education system in itself sufficient to achieve that? We are fully aware of the dangerous consequences or the effects of the media today—the cinema, the TV, the magazine. Unless and until there is a viable media policy—because, it is not disputed that media in a big way influences the attitudes and if it continues with miracle solutions, with phantasy building—I think this character building or value building will remain an idle dream.

There is also a mention of model schools in the districts and a uniform syllabi. This is a very important matter today. I congratulate the Minister and the Government for discussing this and for taking the initiative. This document also correctly points out that it is after a long struggle that we could achieve our freedom and our unity. And, Sir, after the last 38 years or so, we find today that there is growth in the communal forces and in the parochial forces and we also see that these forces are trying to detach the younger generation, those who are in the schools and colleges, from the realities of this country, from our heritage, from the history of the freedom movement itself. Why are these strains there today? There are these strains which we all accept. In my opinion, what is being done should have been done long back. The three-language formula, which has been referred to by some of my friends on the Opposition benches, should be implemented in an honest manner. There is no reason why we should be hesitant about it. The three-language for-

[Shri Anand Sharma]

mula is an accepted formula and it has been accepted by everybody and, therefore, if it is properly implemented, it will promote a sense of belonging among the students. We should also ensure that the students have a sense of belonging to one nation. What is required today is a national-integration educational system. Mrs. Indira Gandhi had done a great service to this country by bringing Education under the Concurrent List. I strongly oppose the demand which has been made by some that it should be brought back to the State List. In fact, what is required today is concurrence and this concurrence must be both in letter and spirit. How do we then invoke that concurrence? I am not suggesting that we are going to disturb the educational pattern which is there in the States in any manner. I am not at all suggesting that. But, to invoke concurrence, we must expand the Central School System in the country. Not only in every district, but also wherever the parents want it, this system should be expanded. We should ensure that all the parents who want to send their children to schools should have the facility of the Central School System and the Government should be in a position to provide more Central Schools. I say this because so far good education has been confined only to two sections, the elite or the affluent section of the society and the employees of the Central Government. But education must be made available to the children of the common man also.

Again, Sir, in these Central Schools, we must have a uniform syllabus. I am not saying that it cannot be uniform. Today, there was a talk about this and a question was raised as to the language in which the syllabus could be uniform. The syllabus can be in more than one language. But the syllabus should be uniform. I disagree with those who say that we cannot have a uniform syllabus in the country because, in one State, we

may have Tulsidas and in another, there may be Rabindranath Tagore. Why can't young men in every State study Rabindranath Tagore? Why cannot we discuss the works of the scholars in the country irrespective of the regions they come from? Once we have this sort of a uniform syllabus, then it is essential for us to make national history a compulsory subject in the schools, the national history which should be written by a national panels by an approved panel, of historians so that there is no distortion in any part and the students, people of the younger generation, are completely aware of the history of the country. Then, the textbooks are also equally important. We must have a national agency with the Central Schools to provide textbooks. The NCERT is there which is one such agency. But we can have more such agencies. But we must ensure that, once we go in for a uniform syllabus, then we have the same textbooks throughout the country for the students. Once we are able to do that, then the students will have a sense of belonging, belonging to one nation, and the strains which we see today, the visible strains on national unity, will disappear and we may be able to ensure that those strains disappear. But the Central Schools alone will not suffice. What I am suggesting for the consideration of the honourable Minister is establishing Central Colleges also, and the Central Schools must be linked to these Central Colleges. And we must try to have one central college in every district of the country which, in quality of education, standard of education, should be equivalent to the best in the country, and these central colleges must be affiliated to Central Universities. And we should have at least one Central University in every State.

Sir, I am certainly not for centralisation of education. My case is for concurrence. That has been accepted after the 44th amendment.

SHRI M. KADHARSHA (Tamil Nadu): What is the difference between the two?

SHRI ANAND SHARMA: Well, I think we all understand the difference. Let it be left to the children or the parents to send to whichever school they want.

SHRI M. KADHARSHA: It will create confusion.

SHRI ANAND SHARMA: I am not creating confusion. I am trying to solve the confusion. I am trying to help you to get over the confusion. (Time Bell rings)

Because of the constraints of time, I do not have much to add. My last submission is that for the universalisation of education which we say we are going to achieve by 1980, equally important is the adult education. There are three suggestions which I have to make.

One is to make use of the modern informative technology, the TV, the video tapes, so that we need not go in for a heavy expenditure. The expenditure will be limited, and these schools or this technology should be addressed to selected audiences. We must assure that those who are already employed, whether at farm or in factory, are also given the training, the latest training, to meet the requirements of the present day. For this, model centres of learning, popular centres of learning, can be set up also for the village people, the farmers, so that you can teach them the latest technology in farming; and also the content of education, elementary education, must be improved so that the farmer in the village is not apprehensive that he may lose his son, or he may lose his chap, that he will be lost to farming if he is sent to school. It may help in minimising or reducing the number of drop-outs or encourage the parents to send their children to schools, more particularly in the rural areas. Sir, I think, for the development of this

country it is absolutely essential that the man behind the wheel is also given training about the latest technology, because those who are employed for the last 20 years, also require refresher courses. And that is why education must be something which is life-long. It should not be confined to a limited phase, and the Government can take necessary steps to ensure that...

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI SANTOSH KUMAR SAHU): Please conclude.

SHRI ANAND SHARMA. I am concluding. Though education is receiving 3 per cent of our G.N.P., or the total spending on education is the second highest after defence, I feel it is inadequate. If you have to ensure better future for the country, the financial constraints must not be allowed to hamper the growth of education. And I request the Minister to ensure that for the new educational policy, for its implementation, large amounts of funds are made available.

Sir, to conclude, this education policy, once it is implemented, could prove to be a blueprint of an India of the vision of Jawaharlal Nehru, an India which is fully developed and self-reliant, which is the endeavour of the present Government and our young Prime Minister. If we have the correct implementation of this new education policy in the coming

4 P. M.
years with increased emphasis on vocationalisation India will find

its rightful place in the world and we will be able to march into the 21st century as a self-reliant and developed nation. Thank you, Sir.

SHRI S. W. DHABE: Mr. Vice-Chairman, Sir, it is unfortunate that this policy perspective on education does not include anything on physical education and sports or any training programme for workers or what is called 'the workers' education'. Per-

[Shri S. W. Dhabe]

haps, since the Sports Department was different from the Education Ministry, only a passing reference has been made to it in the whole document at page 67 top. It says, "Emphasis has to be laid on socio-economic well-being, competence and creativity of the individual which encompasses physical, intellectual and aesthetic development of personality". Only at one place, there is one word 'physical excellence'. At page 112, paragraph 4.128, about the teachers' training programme, they have said: "In addition, besides imparting a strong and relevant value system, adequate emphasis will have to be placed in the curricula on social awareness, national imperatives, physical culture and sports and richness of India's heritage of culture." It is the training programme and curricula that they are discussing. They have forgotten the words "physical education" in the entire document on education perspective.

It is well known that during Emergency this education was brought on the Concurrent List. My friend who spoke earlier was in favour of it. It is not in the Union List. If it had been in the Union List, the matter would have been different and the Central Government would have had the entire responsibility. Today, you want all the programmes to be executed through the State Governments. It is impossible in this country to have Higher Secondary Schools or Primary Schools run by the Central Government. When the Constitution was framed, education was the responsibility of the States. Even now, the education programmes are the responsibility of the States. But it is very clear from the document that the representatives of the State Governments have not been consulted before finalising this document. I do not know who has framed the document. It has been done without any consultation with the States who are expected to implement it.

I will emphasise only about physical education and sports and on workers' education. Sports is a State subject. While education is in the Concurrent List, all the sport programmes are to be implemented through the State Governments. Therefore, it is very essential that there must be proper integration of education and sports policy. It is said that physical education is an important part of education. The chapter on physical education and sports of the International Conference held at Paris in 1978 proclaimed that every human being has a fundamental right of access to physical education and sports which are very essential for full development of his personality. I do not know how the Minister thinks it possible to develop human resources without thinking of physical education and sports. The Government of India, in its Resolution on National Sports policy has accepted in principle in August, 1984, and I quote, that "Importance of participation in sports and physical education activities for good health a high degree of physical fitness, increase in individual productivity and also its value as a means of beneficial recreation, promoting social harmony and discipline is well established. The need of every citizen, irrespective of age and sex, to participate in and enjoy games, sports and recreational activities is, therefore, hereby recognised, and that sports and physical education should be made an integral part of the curriculum as a regular subject in schools and other similar educational institutions." I would like to know from the hon. Minister whether this Government Resolution of 1984 is given a go-by in the policy on education which is given here today. It is stated specifically that this will be the endeavour that physical education and sports will be made an integral part of education. Unfortunately, in our country there is not much of appreciation for sports. Today I mentioned in the morning about the unique performance of Sunil Gavaskar. In any other country he would have been immediately confer-

red with a Knighthood. Today, we are thinking only of programmes. What are the subjects discussed? They are: elementary education, adult education, secondary education and vocational education as if this is the only means specially for development of human resources. Therefore, Sir, when you are constituting a new Department, you are not serious about the development of human resources. It would have been better if Education and Sports Ministry were separately functioning as it was before.

Sir, physical education, as it stands today, is not given any importance either in the schools or the colleges. There is no physical education census. Government could not give any reply when I asked as to how many schools have playgrounds and how many Universities have Board of studies in physical education or sports. Therefore, if we are thinking of the development of human personality, it is very essential that organisation of physical education in educational institutions should be given a pride of place. The physical education teachers are not given equal status with the others in the academic institutions. They are not given any place in the academic councils of the colleges or in the academic bodies. The hon. Minister was talking of the national debate. I would like to tell him that there was a seminar on the 4th November, 1985 at Gwalior under the auspices of the All-India Physical Education and Allied Teachers' Federation where experts met and made certain recommendations. They said that the main thing which is needed is physical education which can be used as an instrument, as a tool to meet the needs of the society, and that physical education is necessary for fitness in the space age. We are talking of the 21st century and maintenance of health and development of working capacity. And None of the recommendations made by the National Sports Policy have been implemented even now. It is no use talking in a big way of edu-

cation policy and the philosophy of it. National fitness programmes are not taken up. Even the rural centres are not established. It has been quoted here about the minimum requirements of schools, colleges and universities, as to how many playgrounds should be, how many colleges should have there, how many playgrounds and what facilities should be there. It is given at page 23 para 57 of the draft national sports policy but nothing has been done uptill now.

I want to say about another thing. That is about the workers education. Workers' education scheme is under the Labour Ministry. Workers' education should find a place in the curriculum. In America and many other countries, workers' education is part of the curriculum and diplomas and degrees are given. It plays a very important role for improving productivity and also in helping the proper organisation of workers. The workers' education today is being run on parallel lines and that is why it is affecting our policy on education. I, therefore, appeal to the Minister to consider my amendment and send this, as it is not a complete document, to the expert committee and get a proper report in the next session of Parliament.

SHRI PAWAN KUMAR BANSAL (Punjab): Mr. Vice-Chairman, Sir, education is the most potent tool for the development of human resources which, in turn, helps in proper utilisation of all other resources. The Status Paper itself admits in Paragraph 1.2 and I quote "Only education can imbue people with the knowledge, the sense of purpose and the confidence essential for building a dynamic vibrant and cohesive nation capable of providing to people with the wherewithals for creating better fuller and more purposeful life."

Realising that a minimum level of education is imperative for the development of individual personality, for inculcating a value system and for

[Shri Pawan Kumar Bansal]

making the citizen aware of social responsibilities, our founding fathers enshrined in Article 45 of the Constitution of India, a goal of providing free and compulsory education for all children up to the age of 14 years by 1960.

Today, 26 years after the deadline, the population of illiterates has increased manifold and the official statistics pointing to the increase in literacy rate, the increase in student population and the rapid growth in the number of schools and colleges sounds unconvincing, rather deceptive when we realise that in absolute numbers the population of illiterates has kept on increasing, and that by the year 2000 A.D. India would have the largest concentration of illiterate population in the world.

Sir, in spite of top priority accorded to the elimination of illiteracy today many schools are without building and only 58.5 per cent of the primary schools have black boards, while many schools go without basic amenities, such as drinking water, urinals, lavatories and other facilities. Out of the total expenditure on education, the share on primary education has been constantly declining. While the State spends about Rs. 3,600 per annum on a college student, the amount spent on a primary school student is only Rs. 190. This is so when one out of every four poor children does not even go to school at all and 23 per cent of those joining the primary schools reach class VIII while only six per cent enter college. It is only this 6 per cent which is catered to by the major chunk of this Rs. 6,000 crores. This is a glaring inequality in education.

Sir, we lament over the alarming drop out rate in the primary schools. We are also conscious that free education itself is no incentive to a poor parent to send his children to school as any trifle they bring home from work or begging is no trifle for the family struggling to plod along in life. In my opinion, Sir, introduc-

tion of some form of a scheme providing for a wage compensatory allowance for school-going children belonging to families living below the poverty line is absolutely essential to achieve our avowed object of universalisation of elementary education.

There is another important dimension of this question. The Status Paper reveals that only 10 per cent of the total work force is employed in the organised sector. To get employment in the organised sector even as a peon, one has to be essentially at least a matriculate which proves the stark reality that one who has not benefited from the Government assistance during childhood cannot earn a good livelihood in adult life. The inequity in society is thus perpetuated under the present system to the detriment of the poor, particularly the rural poor.

Education must not be sold but imparted free and every Government is charged with the primary duty to provide good education to its youth. However, looking to the limited resources, which too are utilised predominantly for the benefit of the urban middle and upper middle classes as well as the employers in the corporate sector, I am of the opinion that the Government must work out some formula to realise from the corporate sector a reimbursement for the amount spent by the State on the education of the employees.

Today we talk of delinking degrees from the jobs. When we have a glut of educated unemployed or educated unemployables in the country, such talk would only be an esoteric exercise. If the employer in the corporate sector is be asked to pay for the education of his employees, he would insist not on degree but would himself judge the competence of the prospective employees. May be, a dynamic youngman who has passed only matriculation examination is able to do as good as a Ph. D in selling his consumer goods. This would obviously delink degrees from jobs in

and field of human endeavour would set a trend for others. This would also inject quality in education and restore dignity to knowledge and learning. Also, the teachers would become accountable to the students and the parents rather than to the indifferent faceless bureaucracy.

Talking of teachers, we all want them to be living examples of every conceivable virtue on the earth but we fail to appreciate that quality of teaching can be improved only if genuinely talented persons are attracted to the profession and for which the career has got to be made monetarily attractive in today's world of spiralling prices and high inflation. It is definitely an unpleasant sight to see teachers having to resort to strikes to air their grievances and demand better pay, housing and better career prospects or to resist the compulsion to sign receipts for amounts larger than what they are actually paid.

Sir, in the perspective of limited resources being available for an important subject as education, any call to the voluntary agencies for furtherance of educational goals, should not be looked upon with suspicion as has been done in certain quarters. It should only be ensured that such agencies do not turn their activity into one for personal gain or turn the temples of learning into teaching shops for personal aggrandisement and the bureaucracy acts not as a dampening agent but as catalyst in their functioning.

Because of constraints of time I would conclude by making certain bare statements which I would urge the hon. Minister to take note of. I must compliment the Government for laying emphasis as it has done on the non-formal education by starting Indira Gandhi National Open University and promoting non-formal and distance education in various manners. Secondly, we have got to do something about the present-day

examination system which breeds an environment where adequate attention is not paid to teaching or to independent study, but cramming of facts. Then, the syllabus should also make provision for a flexible combination of courses.

About the inculcation of moral values and making education socially relevant, enough has been said and I would only say that it should be ensured that the education given to our students in our country should create an ethos which makes them aware of our cultural heritage; in fact, synthesises the present-day advancement with our culture and helps us to stick to our moorings.

Finally, Sir, when I talk of the ethos which has to be generated or inculcated in the minds of the students, I feel that in our country, not equating advancement with westernisation, we have to see that all the progress that we make in the field of education, all the research that we undertake, ultimately go for the betterment of our society. The X-ray laser beams can bring about a revolution in the medical field. But we know that America is utilising this for its Star Wars programme. This we have to resist.

It is for the first time that the Ministry of Human Resource Development has been created in our country and a greater thrust has been given to this human endeavour. After a period of five years, when we see the result of the present policy which the Government is going to formulate and follow, I am sure, India would not only be ranking number one among the developing countries, but would compete with the most advanced countries of the world.

Before concluding I would mention only one more point. In the present ten plus two plus three system, at the plus two stage, provision should be made for vocational alternatives and steps should be taken for strengthening the teacher-training pro-

[Shri Pawan Kumar Bansal]

grammes. Wherever we have a secondary school, it should be made a nucleus for inter-action between that secondary school and the middle and the primary schools, falling in that area. Thank you very much.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI SANTOSH KUMAR SAHU): Mr. Gopalasamy Absent Mr. Mitra.

SHRI SANKAR PRASAD MITRA (West Bengal): Mr. Vice-Chairman, Sir, I have been attentively listening to the speeches delivered by hon. Members who preceded me. I believe, on seven points, a consensus can be reached. One, our educational policy must embrace the whole of India, that is, 20 per cent of its urban and 80 per cent of its rural areas. Two every Indian has a birth-right to a minimum common education. Three, accident by birth in a particular community or society cannot determine access to education. Four, economic needs are compulsives of life and the educational policy must respond to these needs. Five, the urge for education is not the same in every individual. Six, university education must be reserved for those who aspire to be path finders in their respective disciplines. And seven, it would be a tragedy if university degrees became cheap or easily available as it would adversely affect every level of education starting from higher education to the lowest level.

A point has been raised about democratisation of education by one of the hon. Members in this House. Democratisation of education is an attractive term by itself. We are all believers in democracy and we would not deny democracy to any place or institution, but I am afraid that, if democratisation means that vice-chancellors, pro vice-chancellors, registrars, professors, teachers and even non-teaching staff are to be appointed on political considerations only without any regard for academic qualifications or for merit, it

would be a great tragedy for education as such. If students councils everywhere in every university, are going to be battlefields of political parties outside, it would be a tragedy for education as a whole. Keeping this particular aspect in view which is vitiating our educational system throughout the country, I believe considerable rethinking is necessary on the issue of democratisation of education. And from that point of view I believe it is a blessing that education is in the Concurrent List and not in the State List.

The last point I wish to mention is that you started the International Youth Year in our country on the birthday of Vivekananda. You have declared Vivekananda's birthday as the Indian Youth Day. Vivekananda throughout his life had insisted on man-making as well as character building education. He said, man-making education only may create personalities but would not create the complete man. Therefore, character building is as much important as man-making or as quality of education. It is often said that in a secular country like ours what is the good of talking about moral or spiritual values, moral or spiritual values would be irrelevant in the context of secularism. This is indeed a strange argument. I have had the good fortune of studying the educational systems of countries which do not believe at all in God or in religion, but in their systems—time will not permit me to repeat the code in this debate—a minimum of moral code is insisted upon and that minimum moral code is taught in the primary stage, in the secondary stage and in the higher stage. In every stage of education, they insist on this moral code to be obeyed and observed by the student community if they want to remain within the stream of education. Therefore if these countries without any faith in God or in religion can insist on a moral code, I do not see what prevents us from

talking about moral or spiritual values. I do hope all these aspects would be borne in mind in formulating our final policy on education.

Thank you.

श्री सुरेश पचौरी (मध्य प्रदेश) :
उपसभाध्यक्ष महोदय, मैं आपका आभारी हूँ कि आपने मुझे 'बैलेंज आफ एजुकेशन-ए पालिसी परसेप्टिव', जैसे महत्वपूर्ण विषय पर बोलने का मौका दिया है। मान्यवर, हमारी शिक्षा प्रणाली वृद्धित हो गई है। मैकाले की शिक्षा का मूल उद्देश्य बाल या बालक बनाना हो रहा गया है। यह बात पिछले लम्बे समय से कई लोगों द्वारा बराबर और लगातार दोहराई जा रही है। शिक्षा में परिवर्तन की दृष्टि हर स्तर पर चाहे वह राजनेता हो, चाहे विभिन्न संगठन के लोग हों, चाहे शिक्षाविद हों, हर स्तर पर की जा रही है। लेकिन हमें यह कहने हुए बहुत गवे हो रहा है। कि इस दिशा में यदि किसी ने मार्गक पहल की है तो वे हैं हमारे गतिशील और कर्मठ युवा प्रधान मंत्री। इन्होंने इस दिशा में पहल की है जिनके कथनी और करनी में किसी भी प्रकार का कोई फर्क नहीं है। यह देश के नागरिकों के लिए सुखद और प्रेरक उपलब्धि है और शिक्षा में आमूल परिवर्तन की साधकता को मद्देनजर रखते हुए यह दस्तावेज प्रस्तुत किया है जिस पर यहाँ बहस हो रही है। 'शिक्षा की चुनौती' के दस्तावेज में चतुर्थ अखण्ड भारतीय शिक्षक सर्वेक्षण का इवाला है जो घोषणा करता है कि आजादी के बाद देश में शिक्षा का प्रसार व्यापक रूप से हुआ है। आज देश में पाँच लाख प्राथमिक शालाएँ, सवा लाख माध्यमिक शालाएँ, 52,279 उच्चतर माध्यमिक स्कूल, 4-5 हजार महाविद्यालय और 150 के करीब विश्वविद्यालय स्थित हैं। छोटे-छोटे शहरों, कस्बों तक महाविद्यालय होना हमारे लिए बड़े गवे की बात है। 13 लाख के अधिक शिक्षक आज हमारे देश में हैं। सरकार रक्षा के पश्चात् सबसे अधिक राजि शिक्षा पर खर्च करती है।

मान्यवर, हमारे संविधान में यह स्पष्ट रूप से परिभाषित है कि 14 वर्ष की उम्र के सभी बालक-बालिकाओं के लिये निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का इंतजाम होना चाहिए। सन् 1960 तक यह लक्ष्य पूरा किया जाना संविधान में निर्धारित था। इसे पूरा करने के लिए 1949 में डॉ० राधा कृष्णन की अध्यक्षता में एक शिक्षा आयोग गठित किया गया। 1952 में 'मदालियर आयोग' बना तथा 1966 में 'कोटारी कमीशन' शिक्षा की प्राथमिकताओं व सुधार के लिए बना। परन्तु निर्धारित सीमा अवधि के 25 वर्ष बाद भी सामाजिक विसंगतियों, आर्थिक असंतुलन, तकनीकी न्यूनताएँ और कानूनी अड़चनों के कारण हम अपने वांछित लक्ष्य तक नहीं पहुँच सके।

सर्वेक्षण में स्पष्ट है आज भी देश के 1.91 लाख गाँवों में स्कूल नहीं है। जहाँ स्कूल है वहाँ हालात अच्छे नहीं हैं। देश की 9 प्रतिशत शालाएँ छूने आकाश के नीचे लगती हैं। 40 प्रतिशत स्कूल में भवन पक्षे नहीं हैं। 39.72 प्रतिशत स्कूलों के पास ब्लैक बोर्ड नहीं है। 60 प्रतिशत स्कूलों में शुद्ध पेय जल का अभाव है। सर्वेक्षण के अनुसार देश के 36 प्रतिशत स्कूलों में केवल एक शिक्षक तीन-चार कक्षाओं को संभालता है। हमारे देश में पहली कक्षा में परती होने वाले हर 100 बच्चों में से 23 बच्चे ही आठवीं कक्षा तक पहुँच पाते हैं।

अतः शिक्षा की इस प्रक्रिया के लिए शिक्षक, भवन और उपकरण आदि की ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि हर शिक्षक संस्था अपने आप में पूर्ण हो। अर्द्ध राजीव जी हर जिले में एक केन्द्रीय विद्यालय खोलने की घोषणा कर चुके हैं। और उनके निर्देशानुसार देश के हर जिलों में केन्द्रीय विद्यालय शीघ्र प्रारम्भ किये जा रहे हैं यह हमारे लिये गौरव व प्रशंसा का विषय है।

[श्री सुरेश पचौरो]

हमारे देश में मौजूदा शिक्षा के ढाँचे ने सबसे बड़ा नुकसान यही किया है कि परम्परा और आधुनिकीकरण के बीच एक चौड़ी दरार पैदा कर दी है। यह अमीर-गरीब, शहर देहात, को अलग करती है। वह दो पृथक भौगोलिक क्षेत्रों के बीच अलग-गै पड़ा करती है। इसलिए आज जब हम अपनी नई शिक्षा नीति पर विचार करने जा रहे हैं तो इन बातों पर ध्यान देना बहुत जरूरी है। हमारी शिक्षा प्रणाली सीखने की न होकर पढ़ने की ज्यादा हो गई है। हमारी शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि जिसमें परम्परा और आधुनिकता को जोड़कर सामंजस्य स्थापित हो। हमारी शिक्षा प्रणाली असमानता को प्रश्रय न दे बल्कि उसको दूर करने की प्रक्रिया में सशक्त भूमिका निभाये। हमारी शिक्षा रोज-गारोन्मुखी हो। देश की शिक्षा का ढाँचा ऐसा बनायें जो देश की विकासशील आवश्यकताओं के अनुरूप हो। प्रौढ़ शिक्षा एवं स्त्री शिक्षा पर समुचित ध्यान दिया जाये, यह आज की मौजूदा आवश्यकता है। डिस्प्लिन और नेशनल ओनर छात्रों के सम्मुख प्रमुख मुद्दा सोच का होना चाहिए। हमारी शिक्षा का वर्तमान ढाँचा ऐसा बन गया कि शिक्षक बताता है, बच्चा सुनता है। अर्थात् शिक्षा मात्र सूचनाओं का संग्रहण बन गई है। इस पर विचार करने की आवश्यकता है।

मान्यवर, अब मैं परीक्षा प्रणाली की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हमारी परीक्षा पद्धति ऐसी है कि जिसमें ज्ञान नहीं, याददाश्त का इस्तेमाल होता है। वर्ष में एक बार परीक्षा आयोजित होती है। जो छात्र 33 प्रतिशत अंक प्राप्त कर लेते हैं वे पास हो जाते हैं। इसमें भी परिवर्तन की बहुत जरूरत है। इस संबंध में मेरा सुझाव है कि पास होने का प्रतिशत 35 प्रतिशत में बढ़ाकर 50 प्रतिशत या 45 प्रतिशत कर दिया जाय। कृपांक देने की जो पद्धति है वह भी बन्द की जानी चाहिए। जो प्रश्न पत्र हों

वे ज्यादा से ज्यादा अब्जेक्टिव टाइप के होने चाहिए। कुछ प्रश्न निवृत्तान्तरक भी होने चाहिए। निर्धारित ज्ञान पास करना काफी नहीं है। इसलिए जरूरी है कि क्वेश्चन पेपर ऐसे सेट किये जायें कि उनमें अब्जेक्टिव टाइप के क्वेश्चन ज्यादा हों।

मैं इस ओर भी ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि हमारी शिक्षा का जो सेशन होता है उसमें बहुत छुट्टियाँ होती हैं। इसमें जमी की जाने की बहुत जरूरत है। खासतौर से हमारे जो नेशनल फेस्टिवल्स हैं उनमें स्कूल-कालेज और प्राइमरी पाठशालाओं में छुट्टी कर दी जाती है। मैं समझता हूँ कि नेशनल फेस्टिवल्स के दिन शिक्षा संस्थाएं बन्द न रहें तो उनका महत्व और भी बढ़ जाएगा और उनको स्कूलों-कालेजों में मनाया जा सकेगा। इन फेस्टिवल्स का बूनिफादी इतिहास है। उसमें हमारे छात्रों को अधिक से अधिक जानकारी होनी चाहिए। इसके लिए जरूरी है कि इन दिनों में स्कूल और कालेजों में छुट्टी न होकर स्कूलों में इनको मनाया जाता चाहिए। इसके साथ-साथ पर्यावरण का ज्ञान और उस पर नियंत्रण रख सकने की योग्यता हमारे पाठ्यक्रम में आवश्यक रूप से शामिल होने चाहिए। शिक्षा में नैतिकता व रचनात्मक कार्यों को प्रोत्साहन मिले, ऐसे पाठ्यक्रमों का समावेश हो। साथ ही निम्न छात्रों के लिए जो छात्रवृत्ति दी जाती है वह पर्याप्त नहीं है। उसमें भी वृद्धि करने पर विचार किया जाना चाहिए। हमारे मध्य प्रदेश में पढाई कमाऊ योजना चलाई जा रही है। उसके लिए मेरा केन्द्रीय सरकार से आग्रह है कि उस शिक्षा नीति पर विचार किया जाना चाहिए। वह रोजगारोन्मुख शिक्षा की ओर अग्रसर एक महत्वपूर्ण कदम है। उसके लिए भी अतिरिक्त धनराशि आवंटित की जानी चाहिए। शिक्षा में प्रवेश नीति सर्वमान्य व क्षेत्रीय आवश्यकता की पूर्ति के अनुरूप होनी चाहिए। इस मौके पर मैं इस बात की ओर भी ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि शिक्षकों के प्रशिक्षण की तरफ भी ध्यान दिया

जाना चाहिए। जहाँ हमारे शिक्षण अपने आप में अद्वेष्ट हैं, उनको रेस्कोट की जगह चाहिए क्योंकि हमारे यहाँ एक पुरानी कठिनाई है कि गुरु गोविन्द दोनों खड़े, काने नागू पाँच, इन्हो मड़ना को देखा हुए उनसे सम्मान को मद्देनार रखते हुए जहाँ उनके वेरा में वृद्धि की जानी चाहिए, जहाँ उनको प्रतिगिकन सुविधाएँ दी जानी चाहिए वहीं उनके प्रशिक्षण को भी व्यवस्था की जानी बहुत आवश्यक है। हर पाँच वर्ष में शिक्षणों का रेस्कोट कोष निश्चित किया जाना चाहिए, ऐसा मेरा सुझाव है। साथ ही टेक्निकल शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। भारत की 78 प्रतिशत आबादी गाँवों में है जो बि पर निर्भर करती है। अतः बि के लिए उच्च शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए। वर जिये में आई०आई०टी० और पोस्टेक्निक कालेज खोलने की व्यवस्था सेन्ट्रल स्कूलों की तरह की जानी चाहिए। ताकि शिक्षा को सही रूप में हम रोज-गारोन्मुख बना सकें और शिक्षा को नही रूप में अच्छा स्वरूप प्रदान कर सकें। मान्यवर, एजुकेशन पालिसी का प्रस्तुत दस्तावेज एक स्वागत योग्य कदम है और इसके लिये मैं आदरणीय प्रधान मंत्री राजीव गांधी और केन्द्रीय सरकार को बधाई देता हूँ, और विश्राम करना हूँ कि जिन भावनाओं, जिन आकांक्षाओं और जिन आशाओं के अनुरूप यह दस्तावेज प्रस्तुत किया गया है, उसकी पूर्ति की दिशा में यह देश के नव-निर्माण के लिये एक उत्प्रेरक साबित होगा।

डा० एम० हाशिम किदवई (उत्तर प्रदेश):
जनाबे सदर और मोअज्जिज मेम्बरान, सबसे पहले तो मैं आपका शुक्रिया अदा करता हूँ कि आपने मुझे इस वहस में अपने इजहार खयाल का मौका दिया। वक्त की किल्लत की वजह से मैं बहुत मुकबसर अल्फाज में अपने मारुजात पेश करूँगा और मुझे उम्मीद है कि मिनिस्टर साहब इस पर तबज्जह फरमायेंगे। हमारी बह बहुत बड़ी खुशकिस्मती है कि आज हम स्टेट्स पेपर यानी चैलेंज आफ एजुकेशन पर गौर करने के लिये यहाँ जमा हुए

हैं और इसमें जिये हमारे मिनिस्टर साहब खाननौर से काबिले मुबारकवाद हैं और मुझे पूरी उम्मीद है कि उनकी लायक कयादत में हमारा मुल्क तालीमी मैदान में आगे बढ़ेगा और किसी से पीछे नहीं रहेगा। आज हमें फथ है कि हमारा मुल्क दुनिया की सबसे बड़ी जम्हरियत है। आज इस मार्डन सोशलिस्ट और सेकुलर इंडियन रिपब्लिक को सामने रखकर, खासकर तरक्की के मैदान में यह जो आगे बढ़ रहा है, इसको सामने रखकर अगर यह कहा जाय तो वैजा न होगा।

अब बजमे जहाँ का और ही अंदाज है मशरिक वमगरिव में तेरे दोर का अंगारा है।

यह हमारे मुल्क की बहुत बड़ी खुशकिस्मती है कि इसकी कयादत, जहाँ हिम्मत जवाँ बख्त महबूब वजीरे आजम राजीव गांधी के हाथ में है जो हमारे मीरे कारवाँ हैं और जिनकी इंतयाजी खशूसियत और उनकी खास खूबियाँ इस तरह हैं, निगाहे बलन्द, मुखन दिवानवाज जांपुरुशेज यही है रखते सफर मीरे कारवाँ के लिये। जिय तरह से कोई भी मुल्क आजाद उस वक्त तक नहीं रह सकता और अपनी आजादी को उस वक्त तक बरकरार नहीं रख सकता कि जब तक कि वह एसानामिक या माशी ऐतवार से मजबूत न हो। इस तरह कोई भी मुल्क सही मायनों में उस वक्त तक तरक्की नहीं कर सकता जब तक कि वह तालीम में आगे न हो। बड़ी खुशी की बात है कि इन स्टेट्स पेपर के जरिये इसकी कोशिश की गई है कि तालीमी निजाम का जायजा लिया जाय और इसमें हर तरह का इम्प्रूवमेन्ट किया जाय और खराबियों को दूर रखा जाय। जैसा कि मैंने अजं किया वक्त की किल्लत की वजह से यह मुमकिन नहीं है कि इस वक्त इसका कोई तफसीली जायजा लिया जाय लेकिन मुख्यमर अल्फाज में अपने सजेंगम पेण करना चाहूँगा।

पहली बात तो यह है कि हमें दोनों चीजों को साथ लेकर चलना है और

दोनों में एक किस्म का वेलेंस रखना है यानी तालीम में क्वालिटी भी हो। और क्वालिटी भी हो। यह न हो कि एक को दूसरे के खातिर कुर्बान कर दिया जाय। दूसरी सबसे बड़ी बात यह है कि हमारे मुल्क के लिये सबसे अग्रिम चीज प्राइमरी एजुकेशन है। इसमें बहुत ज्यादा इस्लाम और बहुत ज्यादा इम्प्रूवमेंट की जरूरत है। जो हमारी प्राइमरी तालीम में जो बेशुमार खर्चियाँ पाई जाती हैं उनका बताना की जरूरत नहीं। जरूरत इसकी है कि इन खर्चाबियों को कैसे दूर किया जाय। इसकी कोशिश की जाय कि कम से कम बुनियादी सुविधायन इन प्राइमरी स्कूलों की हासिल हो। मतलब उनके टीचर क्वालिफाइड हों, उनके तुलबाके लिये बैठने की जगह हो, काम भी ऐसा हो जो इन बच्चों के काम आ सके। इस सिलसिले में मुनामिव होगा कि मिड-डे-मील का प्राविजन किया जाय। देखने में यह आता है कि गांवों में खासतौर से जो बच्चे प्राइमरी स्कूलों में आते हैं, उनके मां-बाप बहुत जल्दी उन बच्चों को उन स्कूलों से हटा लेते हैं। इसलिए हटाने हैं कि वह यह कहते हैं कि हम इन बच्चों से कुछ काम लेंगे। अब अगर गवर्नमेंट को तरफ से इन बच्चों के वात्सायन को कुछ माली मदद की जाए तो मेरे खयाल से इस तरह से डाय-आउट बहुत कम हो जायेंगे। जहां तक यूनिवर्सिटियों या आला एजुकेशन का ताल्लुक है मुझे यह अर्ज करना है कि सब से पहली चीज यूनिवर्सिटी एजुकेशन में हमें यह करना चाहिये कि क्वालिटी और क्वांटिटी दोनों को साथ-साथ रखना चाहिये। कबल इसके कि यूनिवर्सिटी के सिलसिले में मैं कुछ अर्ज करूँ आम तालीमी निज़ाम के सिलसिले में मैं कुछ अर्ज करना चाहूँगा। बेहतर यह होगा कि अगर हम तालीम के सिलसिले में उसूलों बातों को नजरअन्दाज न करें। मतलब हमारा मुल्क एक महजबी मुल्क है। आज हमारे मुल्क में तास्सुब है, फिरकापरस्ती, तंगनजरी, सुबाइयत, इलाकाइयत यह सब ताकतें सिर उठा रही हैं। इनका सिर कुचलने के लिए और इनका कामयाबी से मुकाबला करने के लिए जरूरत इस

बात की है कि हमारे कॉमिज में मजहब और अखलाकी तालीम का एक हिस्सा हो और बच्चों को मजहब और अखलाकी तालीम दी जाय ताकि वह दूसरे नाम मजहबों का रिस्पेक्ट कर सके और इसका करेक्टर ऊंचा हो। साथ-साथ इसका भी जरूरत है कि फ्रीडम स्ट्रगल में हमारे बुजुर्गों ने, हमारे लाडलों ने और बेशुमार हिन्दुस्तानियों ने जो कुर्बानियाँ की हैं उसको भी कांस में शामिल कर दिया जाए ताकि हमारे बच्चे समझ सकें कि हमारे मुल्क ने कितनी बड़ी कुर्बानियों के साथ आजादी हासिल की है। तीसरी जरूरी बात यह है कि टेक्स्ट बुक्स का रिवाइज किया जाए ताकि वह सही मायने में तास्सुब और तंगनजरी से پاک हो। चौथी बात हम सिलसिले में यह भी अर्ज करना चाहूँगा कि तालीम के सिलसिले में मदरटंग या मादरी जवन का बहुत ज्यादा अहमियत हासिल है। जरूरत इस बात की है कि तीन लैंग्वेज फामिली को सही तौर से हर स्टेट में इम्प्लीमेंट किया जाय बदकिस्मती से बाज यह रियासतों में हम पर अम्ल नहीं हो रहा है। यूनिवर्सिटी तालीम के सिलसिले में मैं अर्ज करना चाहूँगा कि आज हमें इस पर बड़ा फक्र है कि हम दुनिया की सबसे बड़ा जम्हूरियत हैं और हमारे मुल्क में पंचायत से लेकर पालियामेंट तक हर जगह इलैक्शन होता है और डेमोक्रेसी है तो कोई बजह नहीं है कि तालीमी इदारों में एजुकेशनल इस्टीमियेशन में हम एकेडेमिक डेमोक्रेसी और तालीमी जम्हूरियत कायम करें, और इन तालीम इदारों को हम परफॉर्मिज्म और शिडूल एटमोस्फियर से पाक करें। बड़े अफमांस की बात है कि यूनिवर्सिटीज के वाइस चांसलर्ज यूनिवर्सिटी को किसी बॉर्ड के सामने भी अकाउंटेबल नहीं है। इस का खत्म करना चाहिये और इसके साथ-साथ उनको जो खसूसी अस्तियारात या स्पेशल पावरज दिये गये हैं उन्हें खत्म किया जाय ताकि यूनिवर्सिटीज सही मायने में डेमोक्रेटाइजेशन हो और उनकी एटोनीमी बरकरार रहे। गवर्नमेंट यकीनन अपना कंट्रोल रखे लेकिन यह कंट्रोल जो हो तो पूरी तरह से यूनीफार्म या कन्वेंस्टेंट

होना चाहिए। यह न हो बाज़ मौकों पर गवर्नमेंट कोई दखल न दे और बाज़ मौकों पर हर छाटे-छाटे मामले में दखल दे। आख़री मैं अज़े करना चाहूंगा कि हमारे मुल्क के कल्चर को सत्र से बड़ी प्रसूमिदत यह रही है कि हमारे मुल्क में टीचरों या उस्तादों को बड़ी अहमियत और बड़ी इज्जत हासिल रही है। प्राचीन भारतवर्ष में भी और इसके बाद भी अरसाद-पेदराज गुरु सेवा हमारे मुल्क के कल्चर का एक खास हिस्सा था लेकिन बदकिस्मती यह है कि अब टीचरों की यह पोजीशन बाकी नहीं रही है। तो कोशिश यह होनी चाहिये कि हमारे टीचर्स को वही पोजीशन हासिल हो। हमारे टीचर्स आज मूलाजमत की सिक्योरिटी नहीं है लेकिन हमें पूरी कांशिश करनी चाहिए और मैं मिनिस्टर नाहब से खास तौर से दरख्वास्त करूंगा कि उसकी तरफ तवज्जह फरमाये। टीचर्स की सिक्योरिटी हासिल रहे ताकि वे सोसाइटी में अपनी पुरानी पोजीशन हासिल कर सकें और उन्हें इज्जत का महकम हासिल रहे।

आखिर में हम सब (समय की घंटी) चाहते हैं कि पैसे की कमी न हो। सेवेय फाइव डायर प्लान में जितनी एकम एजुकेशन परपज के लिए दी गयी है उसमें इजाफा हो ताकि हम तालीमी मैदान में आगे बढ़ सकें।

[قاکٹر ایم۔ ہاشم قدوائی]

(اثر پرورس): جذاب صدر اور معزز
مہبران - سب سے پہلے تو میں آپ
کا شکریہ ادا کرتا ہوں کہ آپ نے مجھے
اس بحث میں اپنے اظہار خیال کا
موقع دیا - وقت کی قلم کی وجہ
سے میں بہت مختصر الفاظ میں
اپنے معروضات پیش کروں گا اور مجھے
امید ہے کہ مستور صاحب اس پر
توجہ فرمائیں گے - ہماری بہت بڑی
خوش قسمتی ہے کہ آج ہم اسٹیج پر
یہودی یعنی جیلنگ آف ایجوکیشن پر

فوراً مرنے کے لئے یہاں جمع ہوئے ہیں
 اور اس کے لئے ہمارے منسٹر صاحب
 حیاں طور سے قابل مبارکباد ہیں
 اور مجھے پوری امید ہے کہ انکی
 لائق تہانص میں ہمارا ملک ذوالیمی
 میدان میں آگے بڑھے گا۔ اور کسی سے
 پیچھے نہیں رہے گا۔ آج ہمیں فخر
 ہے کہ ہمارا ملک دنیا کی سب سے
 بڑی جمہوریت ہے۔ آج اس مافوق
 سوشلسٹ اور سیکولر انڈین ریپبلک
 کو سامنے رکھ کر خاص کر پرتی کے
 میدان میں بے چارے آگے بڑھا ہے۔ اسکو
 سامنے رکھ کر اگر یہ کہا جائے تو
 بیچنا نہ ہوگا۔

اب بزمِ چہاں کا اور ہی انداز ہے
مشرق و مغرب میں تہرے دور کا آثار ہے
یہ دور ملک کی بہت بڑی خواہش
قسمتی ہے کہ اس کی قیادت - جوان
ہمت جوان بہشت محبوب وزیرِ اعظم
راجپوت گاندھی کے ہاتھ میں ہے جو
ہمارے مہر کارواں میں اور چلکی
امریکا خصوصیت اور انکی خاص
خوبیاں اس طرح ہیں -

نگہ، بلند مضیق دلاواں جان پرسوز
بھئی ہے رخت سدر منہر کارواں کھلے۔

جس طرح سے کوئی بھی ملک آزاد
اس وقت تک نہیں رہ سکتا - اور
اپنی آزادی کو اس وقت تک برقرار
نہیں رکھ سکتا - کہ جب تک کہ
وہ اٹاناک یا معامی اہلکار سے مضبوط
نہ ہو - اس طرح کہ وہ بھی ملک

[ڈاکٹر ایم۔ ہاشم قدوائی]

صحیح معنوں میں اس وقت تک ترقی نہیں کر سکتا جب تک کہ تعلیم میں آگے نہ ہو۔ یہ بڑی خوشی کی بات ہے کہ اس احتیاج پر پورے ذریعہ سے اسکی کوشش کی گئی ہے کہ تعلیمی نظام کا جائزہ لیا جائے اور اس میں ہر طرح کا امپروومنٹ کیا جائے۔ اور خرابیوں کو دور کیا جائے۔ میں نے عرض کیا وقت کی قلت کی وجہ سے یہ ممکن نہیں ہے کہ اس وقت اس کا جائزہ لیا جائے۔ لیکن مختصر الفاظ میں اسے سچشمہ پیش کرنا چاہوں گا۔

پہلی بات تو یہ ہے کہ ہمیں دونوں چیزوں کو ساتھ لیکر چلنا ہے اور دونوں میں ایک قسم کا بیلنس رکھنا ہے یعنی تعلیم میں کوالٹی بھی ہو اور کوالٹی بھی ہو۔ یہ نہ ہو کہ ایک کو دوسرے کی خاطر قربان کر دیا جائے۔ دوسری سب سے بڑی بات یہ ہے کہ ہمارے ملک کیلئے سب سے اہم چیز پرائمری ایجوکیشن ہے۔ اس میں بہت زیادہ اصلاح اور بہت زیادہ امپروومنٹ کی ضرورت ہے۔ جو ہماری پرائمری تعلیم میں جو ہے شہر خاصاً پائی جاتی ہیں انکو برائے کی ضرورت نہیں۔ ضرورت اسکی ہے کہ ان خرابیوں کو کھسے دور کر دیا جائے۔ اسکی کوشش کی جائے کہ کم سے کم

بنیادی سہولیاتیں ان پرائمری اسکولوں کو حاصل ہوں۔ مثلاً انکے ٹیچر کوالیفائیڈ ہوں۔ انکے طلبہ کے لئے ہتھیارے کو چنگہ ہو۔ کورس بھی ایسا ہو جو ان بچوں کے کام آ سکے۔ اس سلسلے میں مناسب ہوگا کہ مدد - قے - میل کا پرویزن دیا جائے۔ دیکھئے میں یہ آتا ہے کہ گاؤں میں خاص طور سے جو بچے پرائمری اسکولوں میں - آتے ہیں - انکے ماں باپ بہت جلدی ان بچوں کو اسکولوں سے ہٹا لیتے ہیں۔ اس لئے ہٹاتے ہیں کہ وہ یہ کہتے ہیں کہ ہم ان بچوں سے کچھ کام لے لیتے۔ اب اثر کورنٹ کی طرف سے ان بچوں کے والدین کی کچھ مالی مدد کی جائے تو میرے خیال میں اس طرح سے ڈراپ آرٹ بہت کم ہو جائے گی۔ جہاں تک یونیورسٹیوں کی تعلیم یا اعلیٰ ایجوکیشن کا تعلق ہے مجھے یہ عرض کرنا ہے - کہ سب سے پہلی چیز یونیورسٹی ایجوکیشن میں ہمیں یہ کرنا چاہئے کہ کوالٹی اور کوالٹی دونوں کو ساتھ رکھنا چاہئے۔ تیسرا اس کے کہ یونیورسٹی کے سلسلے میں کچھ عرض کروں عام تعلیمی نظام کے سلسلے میں کچھ عرض کرنا چاہوں گا۔ بہتر یہ ہوگا کہ تعلیم کے سلسلے میں ہم اصولی باتوں کو نگرانہ نہ کریں۔ مثلاً ہمارا ملک ایک مذہبی ملک ہے۔ آج ہمارے ملک میں تعصب ہے۔ فرقہ پرستی -

تنگ نظری - صوبائیت - علاقائیت
یہ سب طاقتیں سر اٹھا رہی ہیں -
انکا سر کھانے کھانے اور انکا کامیابی
سے متاثرہ کرنے کیلئے ضرورت اس
بات کی ہے کہ ہمارے کورسز میں
مذہبی - اخلاقی تعلیم کا ایک
حصہ ہو اور بچوں کو مذہبی اور
اخلاقی تعلیم دی جائے تاکہ وہ
دوسرے تمام مذہبوں کی رہبریت
کر سکیں اور ان کا کرکٹر اونچا ہو -
ساتھ ساتھ اسکی بھی ضرورت ہے کہ
فریڈم اسٹریٹج میں ہمارے بزرگوں نے
ہمارے لہجوں نے اور بے شمار
ہندوستانوں نے جو قربانیاں دی
ہیں اسکو بھی کورس میں شامل
کر دیا جائے تاکہ ہمارے بچے سمجھ
سکیں کہ ہمارے ملک نے کتنی
بڑی قربانیاں دیں کے ساتھ آزادی حاصل
کی ہے - تیسروں ضروری بات یہ ہے
کہ ٹیکسٹ بکس کو روائے کیا
جائے - تاکہ وہ صحیح معنوں میں
مضبوط اور تنگ نظری سے پاک
ہوں - چوتھی بات اس سلسلے میں
یہ بھی عرض کرنا چاہوں گا کہ تعلیم
کے سلسلے میں مدر تنگ یا مادی
زبان کو زیادہ اہمیت حاصل ہے -
ضرورت اس بات کی ہے کہ تین
لیکچرر فارمولہ کو صحیح طور سے
ہر اسٹیٹ میں اہمیت دیا
جائے - یونیورسٹی تعلیم کے سلسلے
میں عرض کرنا چاہوں گا کہ آج ہمیں
اس پر بڑا فخر ہے کہ ہم دنیا کی

سب سے بڑی جمہوریت ہیں اور
ہمارے ملک میں پانچایت سے لے کر
پارلیمنٹ تک ہر جگہ الیکشن
ہوتا ہے اور ڈیموکریسی ہے تو کوئی
وجہ نہیں کہ تعلیمی اداروں میں
ایجوکیشنل انسٹی ٹیوشنس میں
ہم اکیڈمک ڈیموکریسی اور تعلیمی
جمہوریت قائم کریں اور ان تعلیمی
اداروں کو ہم فورقلم سے اور شمولیت
ایگموٹی سے پاک کریں -

بڑے افسوس کی بات ہے کہ
یونیورسٹی کے رائس چانسلرز اور
یونیورسٹی کسی باقی کے سامنے
انڈیپنڈنٹ نہیں ہوں - اس کو ختم
کرنا چاہئے اور اس کے ساتھ ساتھ الگو
جو خصوصی اختیارات یا اسپیشل
پاور ڈے کئے ہیں انہیں ختم کیا
جائے تاکہ یونیورسٹیز میں صحیح
معنوں میں ڈیموکریسی ہو اور انکی
آؤٹنامی برقرار رہے - گورنمنٹ یقیناً
لہذا کنٹرول رکھے لیکن یہ کنٹرول
جو ہو تو پوری طرح سے یونیورسٹی یا
کونسلٹیٹ ہونا چاہئے - یہ نہ ہو
یعنی موقعوں پر گورنمنٹ کوئی دخل
نہ دے اور بعض - وقتوں پر چھوٹے
چھوٹے معاملوں میں دخل دے -
آخر میں عرض کرنا چاہوں گا کہ
ہمارے ملک کے کلچر کی سب سے
بڑی خصوصیت یہ رہی ہے کہ ہمارے
ملک میں تہجیزوں کو یا استادوں
کو بڑی اہمیت اور عزت حاصل رہی

[ڈاکٹر ایم۔ ہاشم قدوائی]

ہ۔ پراچینی بھارت ورش میں رہی
اور اسکے بعد بھی موصدراز گورو سہوا
ہمارے ملک کے کلچر کا ایک خاص
حصہ تھا۔ لیکن بد قسمتی یہ ہے
کہ اب تہجروں کی یہ پوزیشن بالی
نہیں رہی ہے۔ تو کوشش یہ کرنی
چاہئے کہ ہمارے تہجروں کو وہی
پوزیشن حاصل ہو۔ ہمارے تہجروس
کی آج ملازمت کی سیکورٹی نہیں
ہے لیکن ہمیں پوری کوشش کرنی
چاہئے اور میں مستر صاحب سے
خاص طور سے درخواست کروں گا کہ
اسکی طرف توجہ فرمائیں۔ تہجروس
کو سیکورٹی حاصل رہ جائے وہ
سومالی میں اپنی پرانے پوزیشن
حاصل کر سکیں اور انہیں عزت کا
مقام حاصل رہ۔

آخر میں ہم سب (وقت
کی گھنٹی) چاہتے ہیں کہ
پہلے کی کمی نہ ہو سہونہ
فائدہ اہر یقین میں جتنی رقم
ایجوکیشن پر ہز کھائے دی گئی ہے
اسمیں اضافہ ہو جائے ہم تعلیمی
مہدان میں آئے ہوہ سکیں۔]

SHRI VALAMPURI JOHN (Tamil Nadu): Mr. Vice-Chairman, Sir, a cursory look or a casual reading of this document "Challenge of Education—A Policy Perspective" would impel anyone to declare at the very outset that this is one of the finest flowers in our educational history. But after this declaration, a kind of enthusiastic unction, if someone deep-

ly gets involved in reading the pages of this document once or twice, the same person will be compelled to say that this document is a conglomeration of all sorts of elements. Strange ideas have been assorted together. Many men have breathed in. But the hon. Minister, the great scholar that he is, may take shelter and say that this is only a soul-search, that it is only a public confession and so it is natural and it is an innate tendency of this document that so many people should have put their heads together. But I would like to tell him that we cannot say that it is a public confession because we are not entitled to say so, because this is only a bureaucratic muddle; it is a bureaucratic failure. The people have no involvement in the enunciation of this policy document. And people have no say in the implementation of this programme. So this can never be a public confession. This is only a bureaucratic muddle, I would like to say emphatically. This document goes to prove that our bureaucracy has failed, miserably failed.

This policy perspective defines education as a certain dynamism and vibrance in chapter 1, para 2. It says in para 4.49 that education prepares an "agile group of people". I would like to say that the 1968 draft created a kind of clash, a perennial, perpetual clash between the individual perfection and social needs. So from this kind of a clash, I do admit and assertively say, this document of 1985 is a long way off. It is definitely an improvement because so many men have breathed in and it seems to be a blossoming flower of great educational philosophers. This document says that education is not stuffing the minds with information. I do admit that it seeks to prepare an agile group of people. It is not memory. It is not mere attendance in school, it is cultivation of knowledge and skills. To learn to learn is education. That is what this document

says. We accept it. It recognises, for the first time, I would say very emphatically, that education has a highly personalised character. It takes a very close practical look at the campus life. It admits that there is a lot of planning at the higher level but very little happens at the receiving end. That is in para 4.24. Though the reference to this is not new the ways wherein the very energy is dissipated are enumerated, for the first time, so emphatically in this document. Unnecessarily hierarchical systems and vested interests in educational activities have been enumerated as reasons. A pervading sense of self-criticism we find in 3.3 and 3.4. It uses a most modern tool of study and action perception, namely, an eye for imbalance and sees the void between the achievements and the urgent needs. Prestige or political expediency, I am happy, have not stood in the way. This divine discontent is the very cornerstone of this great document. It insists so much on Public accountability. With a large Population of illiterates, a hierarchical order that we have, a hierarchical system and non-social commitments, our institutions enjoy a great insularity. It is found in 4.94.

The Vice-Chairman. Shri M. P. Kaushik in the chair.

What I would like to say is not the fall in standards of educational institutions also but giving credence and salutation to the document and the authors of this document, I would like to draw the attention of the honourable Minister that this document thinks that our people are suspicious of science. In 4.51 it says that our people are suspicious of science. I take strong objection to this, because it is the elitist approach of the people who have thought of this document. When we see the development we have made in agricultural field in India today—your judgement may not be that our people are suspicious of science—I will quote a foreigner, Bradlaugh a Nobel laureate, a great agro-

nomist, who said: A small Michigan dwarf variety of wheat from the West when it was rejected by the Philippines, when it was totally rejected by the United States, at the very experimental stage, it is the Indian farmer who has accepted it. He says, "If at all there is any farmer in the world for whom my salutation would go, it is the Indian farmer." When a small Michigan dwarf variety, when it has been rejected at the experimental stage by the United States, by Philippines and their farmers, it is the Indian farmer who has accepted it. I say this because our farmers are not suspicious of science as this foreigner says. I, therefore, take strong objection because this is the elitist approach, this is the elitist view. It is a view that is truncated from the Mainstream of life. It is a view that has nothing to do with common populace in our country, because they do not have the feel, they do not have the pulse, of our people. A Nobel laureate and a great astronomer like Bradlaugh write emphatically and asserts again and again, "If at all there is any agriculturist in this world, I will salute only the Indian farmer because he has accepted the variety, he is prepared for the experiment." You come to the the political parlance, the political decisions of the people. A great British journalist who conducted survey of the electorate throughout the world for the last quarter of a century, writes, "If at all there is any voter who deserves our congratulations, our great reverence, it is the Indian voter." We may have a difference of opinion, because it is still the elitists in this country who brand themselves stigmatise them selves as the great educationists and ennovalors in this country who are looking down upon our people through the British eyes, through the chinks of their colour. A British journalist, who has conducted a world-wide experiment or survey of the electorate for the last over a quarter of a century, writes, "On the other hand in 1967 when the people wanted to reprimand the party they

sent it to power, but they threw their respective leaders out of their constituencies; they were bundled out." So this is the conclusion he arrived at having conducted surveys for a quarter of a century. He assertively says that the Indian voter has got that kind of a discriminating sensibility, he can discriminate an individual from an institution, he knows what is a party and who is an individual. So other people, people from the other world, from the Western countries, from the eastern horizon, they have so much of appreciation for the Indian people and they know so much of the Indian people. When such is the position of our people in the eyes of the world outside, here you say our people are suspicious of science. I take strong objection to this. Our people are prepared for experiments. They have a great value for life. In our country there was a time when because of the steep superstitions people were believing in for centuries together that they had children only by chance. Now, from children by chance to children by choice, it is a long way indeed. Our people are prepared for experiments. Our people are scientific. They may not have the scientific skills. They may not have the scientific knowledge. But their approach is scientific. Basically they have a mental attribute which is scientific. Our people are scientific. I would like to say that unless and until basically you accept that our people are scientific that they have scientific bent of mind, that they have a mental attribute which is scientific that they have a great sense of perception that they can inquire, they can find out, we can not accept that this document will help our people in any way because it is the elitist approach to say our people are suspicious of science.

Altogether we should remove this sort of a think-

5.00 P.M.

ing this sort of a national shame, which I find in this par-

ticular document. This document looks down upon the ability of our people. The sense of self-criticism makes the policy makers hold such wrog premises. What is wrong here? It is the wrong understanding of science learning. It not information from science and it is not the inculcation or introduction of a settled body of knowledge. But it is the inculcation of a spirit of inquiry and it is the higher learning ability, scientific outlook, analysis, synthesis, evaluation etc. and in all these things our people are definitely scientific.

Then, Sir, so much has been said about the model schools. And, Sir, the honourable Minister has taken much pains, in the Lok Sabha, to say that these model schools will not be islands of excellence. But, as a person having great reverence and regard for him, I would like to say one thing. Recently he has said— I find it from the Press—that two schools have been started in Maharashtra and Haryana and when these model schools conducted the admission tests or the entrance examinations, sixty per cent or fifty per cent of the students have been drawn from the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes and they are from the rural areas.

I am not an elderly person to caution him on this. But, certainly, as a Member of this House, I have to tell you that you are being misled. I am sorry to say this. Yet I have to say this. When you say that there are model schools which take sixty per cent of the students from the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes and from the rural areas, will the people believe you? They will not believe you because their standards, are totally different. What you say may be true, but they will not believe.

SHRI P. V. NARASIMHA RAO: I want you to believe because I will take you to these schools. But these schools have not yet started.

SHRI VALAMPURI JOHN: It may be an exception.

SHRI P.V. NARASIMHA RAO: Only the admissions have been made and there is no question of saying that Haryana or Amraoti is an exception. This is perhaps a reflection on the children of India. What I said was that such is the abundance of talent in the rural areas, which is just going untapped, uncared for, unprovided for. That is what I said.

SHRI VALAMPURI JOHN: Thank you, Sir. This is what I am also saying. What I would like to say is that these model schools may become schools of excellence. But what ultimately happens is, as the Minister says that all the talent from the rural areas cannot be tapped and cannot be tagged on to the mainstream. What happens is that we have a model school. Where? In India. When? At the time when there is a Constitutional pledge, a Constitutional promise, a Constitutional directive, under article 45, that there should be universalisation of elementary education, which could not be realised. You think of model schools. Where? In India, where there are students without schools and schools without students and teachers without both! In this situation, Sir, I would like to ask you one question. You are thinking of model schools in an India when there is no basic or fundamental facility for forty per cent of the students.

SHRI P. V. NARASIMHA RAO: I will explain later. I have understood your objection. I know what you are objecting to. I have understood this point from several other Members also. So, will you kindly go on to the next point? I would like to dwell on this point at length later.

SHRI VALAMPURI JOHN: In forty per cent of the schools there are no basic facilities and in sixty per cent of the schools there are no black-

boards. So, here the fundamental and urgent necessity is for universalisation of education. Even in the matter of literacy rates, countries like Vietnam, Chile, North Korea, even China, have higher literacy rates. Recently, there was a release by the World Bank which says:

"It is a shocking revelation that out of the 125 countries in the world surveyed, only 26 countries have worse literacy rates than India."

This is what happens. China is the most populous country with its teeming millions. Even in China where the population is the largest, where the per capita income is low, the literacy rate is higher and these things do not come in the way of higher literacy rates. But we do not have such literacy rates. So, here is a necessity for universalisation of elementary education. So, when the necessity for universalisation of elementary education has not been accepted as a fact, what is the point in or purpose of having these model schools? These are the elitist schools. We are committing the same mistake. If I am educated in a particular school, in a particular way, if I develop my personality in a particular manner, I will think that whatever is sacred to me is sacred to all other. This is a kind of senseless imposition on the poor people of India. Again, Sir, this document talks of giving or imparting the sense of dignity of labour to the students. It is there in para 1.27. How is it possible? One of the characters in one of the very famous novels of Mulk Raj Anand says "I am unclean because I keep others clean." So, there is no dignity of labour in our society, and when there is no dignity of labour in our society, when a person is not respected because of his economic position, because of his particular cultural milieu, what happens is manual labour is dismissed with scornful look. If you ask the students to

[Shri Valampuri John]

take some time away and involve themselves in manual labour, it will end in snobbishness. I may as a student do the job of scavenging, but it does not mean scavenger's job or his social role or material position would be enhanced. When there is no possible evaluation for manual labour in society, this kind of idea will result in snobbishness.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI M. P. KAUSHIK): Please conclude.

SHRI VALAMPURI JOHN: Again, the document talks of values through education. This is not possible because education is a sub-system. We all forget that education is a sub-system and it has got a limitation of its own. I would like to draw the attention of the hon. Minister to the inter-locked constraints that I find in this document. For example, I will tell you: Autonomy versus accountability; we find both here. Autonomy is good but accountability also is good. But autonomy and accountability, if they are stretched too far, ends, they are self-defeating and self-destructive. But this document never says to what extent autonomy is necessary, to what extent accountability is necessary. I am shocked to find that when it speaks of specialised institutions of learning this document is omniously silent on the 7 autonomous colleges in the country which are in existence for the last eleven years. They have not spoken anything about them. Autonomy is good; accountability is good. But the common ground, meeting ground, a compromising formula I do not find in this document.

Again, this document speaks about teachers' salaries and good teaching. It laments by saying that 70 per cent of the expenditure on education goes as teachers' salaries. Yes, it is true. Another 10 per cent goes for the administration of the salary. But

even then we have to see to the teachers' salaries as well as good teaching. They are complementary, because necessarily if you have to find a teacher, good payment is also one of the ingredients, one of the fundamental and elementary things. This document speaks of two extremes. But there is no meeting ground, common ground. (*Time bell rings*).

Again, there is insistence on local culture and uniformity. This document, as regards local culture laments by saying that States are not implementing the 3-language formula. At the same time, it says this. The word 'uniformity' is an anathema to me. I abhor that word. 'Unity' is the word. 'Uniformity' kills the spirit of composite culture of India. It is stale and monotonous. 'Unity' is the word.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI M. P. KAUSHIK): Please conclude.

SHRI VALAMPURI JOHN: When you say local culture, I would like to say that my hon. friend, Mr. Aruna Aladi from my party explained why this two-language formula in our State? Not that we are against Hindi. I am prepared to accept Hindi as an individual, provided I can have the latest in science and technology through Hindi. I am prepared to accept it. But will Hindi deliver that to me? No. Then why do you want us to learn Hindi? If you say that the whole of India can be unified by a single language called Hindi, you are thoroughly mistaken.

SHRI KALPNATH RAI: How the Japanese are...

SHRI VALAMPURI JOHN: You are thoroughly mistaken, because the language is not a unifying factor at all. No man thinks in a language; ne

communicates in a language. I will tell you, for example, that the great Andhras were fighting for a separate Telangana. It might have become a reality. I ask you today, I earnestly ask you, that when they were fighting for separate Telangana they spoke the same Telugu. But when economic reasons took the upper hand, Telugu could not unite them. They wanted a separate State. What happened in Maharashtra? When they fought for Marathwada, they spoke the same Marathi. The language will not keep all the people together, because no man thinks in a language; he only communicates in a language. Then, how do you advocate it? I do not say that Hindi is foreign. It may be a national language, but it is foreign to our area, because we never think Hindi as a language but we consider it a emblem of imperialism. And that's why I say that till the last drop of blood we will fight, which has been misrepresented in this House, that there will be a civil war, this and that. But I would like to ask, when you speak of local culture and uniformity, where is the meeting ground? The meeting ground is totally absent.

I would like to say that there are drawbacks in this 'Challenge of Education' as a document. I would pass to say that many years may pass, many centuries may go, because there are changes; there are bound to be changes. When we compare the life of an individual with the life of a nation, the life of the individual is only like the life of a mosquito, because we have a simmering idea that we should see changes in our lifetime. It is the birth right and privilege of every individual. But it may not be possible, Pandit Jawaharlal Nehru rightly said in the wake of Chinese aggression: "India is like a might elephant. It takes some time to stand up. But when it stands up." We believe in this dictum.

SHRI PARVATHANENI UPENDRA (Andhra Pradesh): Mr. Vice-Chairman, Sir, I have no hesitation

in saying that this document, "The Challenge of Education" is the best document which I have received from the Government of India so far.

SHRI P.V. NARASIMHA RAO: It is a left-handed compliment.

SHRI PARVATHANENI UPENDRA: It is for the first time that such a critical appraisal has been made of our educational system and all the facts have been brought out in this document. I had the good fortune of having a preliminary discussion on this document with the previous Education Minister and I could offer some suggestions. Also, there is a nation-wide debate today which is a very welcome feature. This should have been done a long time ago. Now, the Government and the voluntary agencies have taken that up and I am sure good suggestions will come out of this.

After reading this document, my only comment was that the doctor know the diagnosis but not the prescription. But the answer I got was: "We pose the problems and it is for the nation to suggest solutions for these problems." Therefore, keeping that in view, I am giving a few suggestions. I need not dilate much or be rhetoric. All of us know what the problem is and we need not waste much time on introductions. I know that Mr. Narasimha Rao is an eminent educationist. Ultimately, he got a Ministry suited to his temperament and I am sure he will introduce a new education policy which is best suited to this country.

Our experience has been that whatever we decide, we don't take action on that. I hope it won't meet the same fate as the 1968 Education Policy. Even after 17 years, all the suggestions contained in that policy document have not been implemented. Therefore, it is necessary not only to come to a conclusion on this important policy, but also to take appropriate steps rightaway for implementing them. The document rightly says that primary education must be given the utmost importance because this is the foundation for the entire

[Shri Parvathaneni Upendra]

educational system. But unfortunately this is the most neglected item today. The document says that only 9 per cent of the schools do not have buildings, I do not think Mr. Narasimha Rao believes in that. He has been the Education Minister and the Chief Minister. He knows the condition. Although a building may be there technically, most of the buildings are in such a dilapidated condition that the classes have to be taken outside. They do not have even the minimum facilities. Even in the schools under the Delhi Administration, I had the occasion of pointing out in this House that 600 schools are being run in tents in Delhi alone. That shows the extent of the problem. Therefore, we should give priority to have school buildings under the NREP or some other scheme that you may have. This should be given priority.

The second thing is that great care should be taken in revising the syllabus. Our syllabus is the most defective because it teaches the children, from the infant stage, the differences in our community, the religious differences, caste differences, etc. Most of the lessons teach hatred towards other religions. Therefore, the syllabus should be revised so as to inculcate a sense of patriotism, national unity, what our cultural heritage is, what the salient features of our freedom struggle are etc. These are the things which should be taught and not about Queen Victoria or the invasions of Mohammed Gori and Mohmud Ghazni. Therefore, it is necessary to revise the syllabus right away. The third point is that the retention rate in the primary stage is not satisfactory. That is why several State Governments have introduced mid-day meals and some other incentives for the children to stay on in the schools. But they are also not implemented properly. It is necessary to devise a national policy on this. If not a messy cooked meal, you can give an alternative to the school children

which is most nourishing for the undernourished children. And another thing which we have to do is supplying free uniform to the school children because that is the area where we have not done anything. And at the primary school stage, you see most of the children coming half-clad and almost naked in many villages and side by side you find children of the affluent sections going to the convents in a better dressed manner or even in the same school rich children coming in better dresses. And this develops a sort of inferiority complex among the students from the infant stage. Therefore, Government should supply school uniforms to all the children, at least at the primary stage. The next point is that the audio-visual aids which you have got have not been exploited fully. Now, in Andhra Pradesh, we are starting an experiment of converting all the primary school lessons into video-tapes, and video sets can be used in the schools. The same video sets can be used for adult education, and also as TV sets in the night. That also should be popularised and propagated and all the school lessons can be converted into video tapes and a single teacher or two teachers can handle the five classes at the primary stage. Then, at the secondary stage, we have been talking about vocationalisation from 1963 onwards. In the 1968 Document itself stress has been laid on vocationalisation but nothing has been done. In that regard it is very essential that unless we reduce the pressure of graduates going in for jobs it will be difficult for the country and unemployment problem will increase. Therefore, it is necessary to lay greater stress on vocationalisation. In fact, this should be started from class 8 onwards and not from the 'plus two' stage. At the university stage, my suggestion would be that the present system of affiliating colleges to the universities must be done away with because this is an unnecessary burden. The universities must concentrate on higher education and research projects. They should

not be burdened with all these day-to-day activities of the affiliated colleges. You can have a separate education authority for each State which can look after the management side of the colleges leaving the universities free from the administrative problems. Similarly, We should have separate universities in each State for the medical education and technical education. They need not be combined with the general education or the same university looking after medical colleges, engineering colleges, etc. For this, there should be a separate university. As regard the capitation fee also, we have been talking so much. Some States have abolished it. Some States have modified it. But in this House...

SHRI KALPNATH RAI. What about Andhra Pradesh?

SHRI PARVATHANENI UPENDRA: We have abolished it. Sir, in this House itself there has been a clamour several times that the capitation fee should be abolished altogether because even today in Karnataka and other places they are charging more than Rs. 2 lakhs for a medical seat. That means, only the rich children can be admitted to these colleges.

SHRI M. S. GURUPADASWAMY (Karnataka): Your State is the biggest contributor.

SHRI PARVATHANENI UPENDRA: We have abolished it and all our money is going to Karnataka now. Therefore, Sir, this should be abolished straightaway.

Then, Sir, the Open University concept is a very good concept. I am proud that Andhra Pradesh has shown the way in this respect. We have got a National Open University now. And this concept should be encouraged because it has got great potentialities for future also.

Then Sir, I find that students nowadays are not given ample opportunities for extra-curricular activity,

particularly in the colleges and the universities. In olden days, there used to be a lot of extra-curricular activities, cultural, competition, elocution competitions, sports competitions, etc. But, nowadays, their number has considerably come down. As a result, the students' attention is being diverted. Some of them are becoming extremists, some of them are indulging in eve-teasing and so on. Therefore, it is necessary to keep them occupied not only in extra-curricular activities but also in some nation-building activities. They can be utilised in summer vacations and other vacations in specific projects.

Then, there is a lot of confusion about the medium of instructions also and the use of the languages. In this House itself we raised this question many times. I strongly advocate the this three-language formula should be pursued with greater vigour and without any reservations. Particularly in the North-Indian States, there was a suggestion and there was an experiment also that the third language should be one of the South Indian languages. Only the Haryana Government is actually implementing it. The other State Governments are not doing that. You see, if you ask the Southern States to take to Hindi in greater numbers, it is also necessary that the people in the North-Indian States should simultaneously learn one of the South Indian languages. That will lead to greater national integration.

Then there is one suggestion about union elections or students' union elections in which we find that a lot of heat is being generated and a lot of money is also being wasted. It is almost like a mini general election, whenever a college election takes place. Therefore, I suggest at the risk of being misunderstood that we should go back to the system of indirect elections in which each class elects a monitor and all the monitors elect a college union executive. That will reduce tension in universities and colleges.

[Shri Parvathaneni Upendra]

The college hostels and university hostels must be better equipped and more comfortable.

There is a suggestion for training the students for the all India Examinations. Each college, at least, the colleges which are having post-graduate education, must have a training centre for all-India service examinations. That is a very necessary because most of the boys coming from rural areas study in those colleges and though there are some study circles in Delhi and other metropolitan towns they are charging heavy fees. There are no facilities for boys and girls coming from rural areas to have training for the Central services. Therefore, we should have such facilities also.

Sir, education is now in the Concurrent list. I strongly feel that it should be a State subject exclusively with the Government of India giving the necessary guidelines and advice only. There is no point in having a duplicity in this respect.

As regards teachers, we find that a number of agitations and strikes are going on in all colleges and schools and they are being closed because of teachers' agitations. Therefore, teachers' emoluments and conditions of service must be made adequate enough to attract qualified teachers and keep them satisfied.

My last point is that the money we spend on education, as the Document itself admits, is only 3 per cent of the gross national product, whereas in other countries it is 6 to 8 per cent. Therefore, it is necessary that we spend much more on this vital subject because 75 to 80 per cent of the money allocated goes in salaries alone, leaving very little for equipment and other facilities.

With these few suggestions, Sir, I commend this Document and I hope

that Mr. Narasimha Rao will make up his mind very soon and implement the new educational policy in this regard.

PROF. (MRS.) ASIMA CHATTERJEE (Nominated): Mr. Vice-Chairman, Sir, I thank you for giving me this opportunity to speak on the National Educational Policy. The National Educational Policy Document introduced today before this House has been unusual can did in many respects. It admits in page 60, Chapter II, that the 1968 educational policy has not yielded the expected results. This analysis has given scope for improving the existing education policy as a result of which the new education policy has emerged.

Much emphasis has been laid on the universalisation of elementary education and adult illiteracy. In this context, I would like to mention that a uniform system of education or common system would be a failure. The curricula and course materials should be different based on ethnological and ecological and geographical factors. It is not expected that the curricula for the children of adivasis and tribals should be the same as that for urbans. But the syllabi must be attractive and education imparted to them must be meaningful and should fulfil the needs of the life. I am most concerned about rural masses as 80 per cent of the population live in rural India and poverty is acute there, and therefore all the facilities for education should be provided to the children in the villages and steps should be taken to arrange for training them in rural technology so that then grow up they can apply successfully the knowledge gained by them in order to earn their livelihood and this would also provide opportunities for self employment.

So far as the child labour force is concerned, the employers should take up the responsibility of providing elementary education to them as if

is their **primary** duty to educate them.

I have a humble suggestion to the hon. Minister that heavy course content in school levels should be slashed. Top heavy syllabi must be curtailed so that our children can study the subjects in depth and can have a sound knowledge of the subject.

In my opinion, Sir, a few important subjects should be taught to them particularly in primary schools, namely, arithmetic, history and geography of different States, and natural science, environment, arts and crafts in regional language without neglecting sports and games. Dance, drama and music and local traditional cultural themes should be an integral part of the curricula. For creating interest in science and technology, experiments and field work are to be made compulsory. For developing scientific talent, the centres for scientific hobbies are to be organised.

Adequate number of teachers must be engaged to take care of education for the children. Teachers must consider their students as their own children. This cordial relation is to be developed; otherwise education will lose its value and will have no effect.

Trained teachers in adequate number should be appointed for effective and meaningful education. Refresher courses for these teachers, and teachers at all levels, are to be organised, like KOSSIP and Teacher Fellowship etc. implemented by UGC. Such programmes will help them to keep abreast with the modern developments in humanities, science and technology, arts and crafts and other important areas.

While considering new education policy, due consideration should be given to the recommendations of Radhakrishna Commission and Kothari

Commission and also on Gandhian Policy on Education. Education through work as suggested by Mahatma Gandhi has a great significance as this system of education will develop creativity when children grow up. This will help them to appreciate the dignity of labour and respect for human rights, so essential for national unity.

In curricula for colleges and universities, a few courses on social science are to be introduced so that before they receive degrees they must engage themselves in social work in villages particularly for at least six months in order to make them aware of the reality and to study how their brothers and sisters are leading their life.

It has been suggested that the reform and restructuring in education policy in universities is necessary in the perspective of the needs of the country. The courses should be relevant to the social needs. But effective teaching in the universities cannot be implemented if politics is not eliminated from these places where sanctity is to be maintained. Political appointments of vice-chancellor, Pro-vice-chancellor and teachers is vitiating the academic atmosphere damaging the pure image of the place of learning which we believe as holy as temples. Stringent measures should be taken against these political appointments and to restore peaceful academic atmosphere where devoted and dedicated academicians can work producing a bright generation who will take the leadership in the country in future.

I would like to add that education for self-employment through vocational training and training in technology should be given top priority and this training is to be provided starting from middle school.

For effective education, more financial assistance should be sanctioned in the educational field. In this context, I would like to mention that

[Shri Parvathaneni Upendra]

Japan spends 4.1 per cent of its national income; USSR spends 5.8 per cent, whereas we are spending even less than 1 per cent. This should be at least 3 per cent of our national income. Lastly, education should not be divorced from cultural heritage and spirituality, which would help to build the character of our younger generation. While concluding, I would like to quote Swami Vivekananda:

“Education is the manifestation of the divinity already existing in man”.

Hence, man-making educational policy should be framed. Sir, I believe, the new educational policy presented before the House is a thrust in this direction. With these words, I conclude and I once again strongly recommend the new educational policy which, I think, will be effective, in the coming years. Thank you.

THE VICE-CHAIRMAN (SRHI M. P. KAUSHIK): Prof. B. Ramachandra Rao. He is not here. Shri Ramamurthy.

SHRI THINDIVANAM K. RAMAMURTHY (Nominated): Mr. Vice-Chairman, Sir, I think you for the opportunity given to me to say a few words on the new educational policy. The document which is before the House has clearly brought out a number of fields in which we have not succeeded, that we have to make grater progress in the field of education. In the foreword itself, it says, “This document represents an important step in the process of reviewing and reshaping the educational system”. Sir, the success of any policy depends upon its implementation. Here, the document says:

“The policy takes concrete shape only in the process of implementation.”

Fortunately or unfortunately, education is in the Concurrent List. The States and the Centre have to go together to make this policy a success. Whatever is the policy framed, if it has to be successful, it has to be implemented by the States. This document itself gives certain details which makes it doubtful about the success of the policy if it is to be implemented in the same manner as it has been done all these years. The document says in page 81, 4.44:

“In respect of the teaching of languages too, Central Government is unable to ensure the faithful implementation of the three-language formula. It is necessary to ensure that language does not become a barrier to mobility in India of tomorrow.”

Sir, here, I should be permitted to speak on the language issue because I am one who advocate the three-language formula. I want that the three-language formula should be implemented by all the States. But at the same time, for non-implementation of the three-language formula by the States, the people who are willing to take to the three-language formula should not be penalised, they should not be put in a disadvantageous position. In the State from which I come, in Tamil Nadu, when I was in the Legislative Assembly, in the year 1967 the then D. M. K. Government said that, they will implement only the two-language formula. There was no AIADMK then. It was a united party. The then Chief Minister, the great Annadurai, gave the impression,—in his speech, that he was not against the three-language formula. He said, as a retaliation to what was happening in other States, as a retaliation to the fact that the three-language formula was not being implemented by some States, he was not going to implement the three-language formula, and that he would implement only the two-language formula in Tamil Nadu. But

today, Sir, Mr. Aladi Aruna; while speaking, made a reference to the three-language formula. He said that he accepts the three-language formula, but is opposed to Hindi imposition. Anybody who accepts three-language formula is opposed to imposition of Hindi. That is well-known to everybody. Of course, Mr. Valampuri John has come out with a different definition for the same two-language formula. But here, above all these things I want to tell you that people in the administrative machinery, the officers in Tamil Nadu send their children to schools where they get Hindi education. Most of the politicians, MLAs or even the Ministers there in the State, irrespective of the party to which they belong, whether it is AIDMK, DMK, Congress Party or any other party, their children take education in convent schools where Hindi is also taught.

SHRI VALAMPURI JOHN: I am sorry to say that it is not true.

SHRI KALPNATH RAI: It is true.

SHRI VALAMPURI JOHN: It is totally false. (Interruptions). Have you verified it?

SHRI THINDIVANAM K. RAMAMURTHY: Mr. Valampuri John, I beg to tell you that I was in the Council there in Tamil Nadu and I had thrown a challenge there. I called upon the Ministers to explain as to whose sons were reading in which convent. I threw this challenge when Mr. MGR was present and I did not get the answer.

This is what is happening. The medium of instruction in rural schools is Tamil. Excepting municipal schools, in most of the schools in Madras city the medium of instruction is English. How many of the Ministers or MLAs in Tamil Nadu are sending their children to the rural elementary schools or to the municipal schools in Madras city? Everyone is giving English education to their children, added to which is the Hindi education. And the victim are the poor people. That

is the way the language issue is being taken up. I am not afraid of saying this. Mere emotions alone cannot save anybody. Here it is Tamil Nadu which suffers. Educationally we are not in a position to stand up with other States. It is our children who are the sufferers. So, a solution must be found out with regard to implementation of a nationally accepted policy. Till that time it is the poor public, the poor people who cannot open their mouth, they will be the sufferers. And ultimately education will become the possession of the richer people or of those who can afford to give their children better education.

About the syllabus, I must put in a word here. We are speaking so much of the national integration, past heritage and all that, but our children in Tamil Nadu do not know much about the freedom movement. They know a Jawaharlal Nehru as the first Prime Minister of India, as the greatest statesman of the world, but his sacrifices during the freedom movement are not known to them. The entire history of the freedom struggle is not known to the students up to the higher secondary standards. With this the kind of syllabus we are having. We are going to give education on national integration, unity and all that. There is the necessity for a national syllabus. Of course, the regional image cannot be ruled out. The importance of the regional image must be there. Added to it, the syllabus must contain the national impact.

I will just take a few minutes more. About the method of education, about the universality of primary education, I have to say a few words. We are proud that we are giving nutritional meals in Tamil Nadu. The programme which our late leader Mr. Kamraj brought in, has successfully gone through all these years. This is being implemented by every Government, whether they liked Kamraj or not and whether or not they opposed his own

[Shri Thindivanam K. Ramamurthy]

programmes when he was alive. In spite of that, they are themselves following and implementing these programmes after his death. We must be happy about it. But at the same time, under the nutritional meals scheme, the cooking is done in some of the villages in the school premises itself and in the school building itself. That spoils the very education of the students and takes away the time meant for education of young students. So when we approve of these schemes, it must be made clear that the schools can never become the kitchen and they should not become kitchen for the children. Other alternate arrangements must be made for this purpose.

In addition to this, the new nurseries and private schools or institutions that are coming up—whether primary institutions, nurseries, polytechnics, medical colleges or the supposed engineering colleges—these are coming up with no laboratories or other needed equipments. This is the way in which these new institutions are coming up. And when we are talking of taking the country towards the 21st century, when we are giving so much emphasis to technological side, the education that Tamil Nadu is giving is of a primitive kind in thatched huts and without the equipments required. It is all the more necessary that when we speak so much of modernisation in education, the institutions which are available to the students in the rural areas must be well equipped, both building-wise and equipment-wise. Unless this is done, whatever modernisation we may make in the field of education, will be limited to the students in the urban areas and to the richer classes and not to the poorer classes.

I hope, Sir, while commending this document, my views will be considered by the hon. Minister. Thank you.

डा० इन्द्र प्रताप सिंह (उत्तर प्रदेश) : आदरणीय उपसभाध्यक्ष महोदय,

आपका मैं हृदय से आभार हूँ कि आपने मुझे मानव संसाधन मंत्री माननीय श्री पी० वी० नरसिंह राव द्वारा प्रस्तुत “शिक्षा की चुनौती-नीति संबंधी परिप्रेक्ष्य नामक स्टेट्स पत्र” पर जो 20 अगस्त, 1985 को राज्य सभा के पटल पर रखा गया था, उस पर अपने विचार प्रकट करने का सुप्रवृत्त प्रदान किया है। मैं उसका समर्थन करने का खड़ा हुआ हूँ।

मान्यवर, मैं सर्वप्रथम भारत के प्रधान मंत्री परम आदरणीय राजीव गांधी जी को इस बात के लिए बधाई देना चाहता हूँ कि जिस प्रकार से उन्होंने प्रधान मंत्री पद का कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् समस्त महत्वपूर्ण निर्णय लिये हैं उसी अंशकाल में यह भी एक महत्वपूर्ण निर्णय लिया है कि मानव संसाधन मंत्रालय की स्थापना की गयी है। मैं उन्हें इस बात के लिए बधाई देना चाहता हूँ कि इस महत्वपूर्ण मंत्रालय का कार्यभार उन्होंने माननीय श्री नरसिंह राव को प्रदान किया है जिनकी विद्वेता से यह देश तथा विदेश पूर्णतया परिचित है। मुझे विश्वास है कि उन्हें जो गृहतर भार प्रदान किया गया है उसका वे अत्यंत सफलतापूर्वक निर्वहन करेंगे।

मैं परम आदरणीय राजीव गांधी जी को इस बात के लिए बधाई देना चाहता हूँ कि उन्होंने शिक्षा की वर्तमान नीति में परिवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण पग उठाया है और साथ ही भारतीय संस्कृति के वास्तविक स्वरूप को उजागर करने में दृढ़ संकल्प और कार्यरत हैं। मेरा विश्वास है कि इनके नेतृत्व में भारत न केवल भौतिक उन्नति करेगा बल्कि आध्यात्मिक दिशा में भी उन्नति कर सकेगा। जिस क्षेत्र में वह अतीत में विश्व का गुरु रहा है। श्रीमान्, प्रस्तुत स्टेट्स पत्र पर विचार करते समय जो उसके प्रकथन में कहा गया है, उसका उल्लेख करना चाहूंगा क्योंकि वह अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिसे मैं उद्धृत करता हूँ :

“यह दस्तावेज शिक्षा व्यवस्था पर पुनर्विचार करने और उसको नया रूप

देने की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कदम है। यह विश्वास के साथ बनाया गया है कि शिक्षा व्यवस्था के भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के अनुरूप बनाना है और अपनी कार्यक्षमता और स्वरूप को सुधारना है।”

आगे कहा गया है, जिसको मैं उद्धृत करता हूँ —

“नए युग के प्रारम्भ में देशवासियों को अपने आप से पूछना है कि नई शिक्षा नीति के क्या लक्ष्य होने चाहिये और यदि उन्हें लागू किया जाए, तो क्या समाज उन्हें पूर्ण सहयोग देने को तैयार है।” मैं उद्धरण समाप्त करता हूँ। इस प्रकार मेरे विचार के अनुसार शिक्षा नीति पर विचार करते समय सब से महत्वपूर्ण विषय यह है कि नई शिक्षा नीति का क्या लक्ष्य होना चाहिए?

जहां तक दूसरा प्रश्न है कि क्या समाज उन्हें पूर्ण सहयोग देने को तैयार है, यह इस बात पर निर्भर है कि हमारा लक्ष्य क्या है। यदि लक्ष्य उचित होगा तो उस दशा में समाज उसको अवश्य ही स्वीकार करेगा।

शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित करते समय हम को इस बात का ध्यान रखना है कि हम को प्रधान मंत्री जी के परिकल्पना के अनुरूप इक्सीसवीं शताब्दी के लिए मानव संसाधन को तथा समाज को एवं भारत को बनाना है।

शिक्षा नीति पर एक व्यापक राष्ट्रीय चर्चा आवश्यक है। मूझको प्रसन्नता है कि उसका शुभारम्भ हुआ है। मैं चाहता हूँ कि यह चर्चा भाव वा औपचारिकता बन कर न रह जाए बल्कि उसको अधिक अर्थपूर्ण बनाया जाए, तथा शिक्षा नीति पर अंतिम रूप में निर्णय के पूर्व उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाए।

नई शिक्षा नीति के संबंध में विचार करते समय हमको शिक्षा के सर्वनान्य उद्देश्य को ध्यान में रखना होगा। वह है विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास। शिक्षा का स्वरूप क्या हो, मैं केवल इसी

के संबंध में अपने विचार को प्रकट करूंगा क्योंकि समय बहुत कम है।

1. शारीरिक शिक्षा—विद्यार्थियों को खाद्य सामग्रियों के गुण तथा दोष बताये जाएं। स्वास्थ्य के नियमों का ज्ञान कराया जाए। व्याधियों से बचने के उपाय बताये जायें। आरम्भिक चिकित्सा की जानकारी दी जाए, जिसमें भारत एक स्वस्थ नागरिकों का देश बन सके।

2. नैतिक शिक्षा—जिसमें कि विद्यार्थियों को समाज के प्रति अपने नैतिक कर्तव्यों का ज्ञान हो सके। जब तक नैतिकता नहीं आएगी, नियमों का पालन केवल नियम बनाने से नहीं होगा जिसका इतिहास साक्षी है।

3. आध्यात्मिक शिक्षा—जिससे विद्यार्थी अपनी अन्तर्यात्मा कर सकें और अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान सकें जिससे उसमें मानवीय गुणों का विकास हो सके और सत्यम, शिवम् सुन्दरम् की दिशा में वह अग्रसर हो सकें।

4. प्रकृति की शिक्षा—विद्यार्थियों को प्रकृति की शिक्षा दी जानी चाहिए जिसमें उनके मन में प्रकृति के प्रति प्रेम उत्पन्न हो। तभी इनवायरमेंट की समस्या का वास्तविक समाधान हो सकेगा।

इतना ही नहीं प्राति प्रेम से मनुष्य के जीवन में सरलता, सहजता तथा स्वाभाविकता प्राप्त होगी। प्रकृति स्वयं उसकी गुरु एवं चिकित्सक बन सकेगी।

5. यौन शिक्षा—यह दुःख का विषय है कि यौन संबंधी विषय अत्यंत महत्वपूर्ण होते हुए सब में अधिक उपेक्षित है। इस बात की भी आवश्यकता है कि युवक-युवतियों को यौन शिक्षा प्रदान की जाए जिससे कि उसके प्रति उनमें एक स्वस्थ और सहज दृष्टिकोण उत्पन्न हो सके।

6. भाषाओं की शिक्षा—मैं विभाषा फारमूले के पक्ष में हूँ, परन्तु इस बात की आवश्यकता है कि उसका दृढ़तापूर्वक पालन

[डा० रुद्र प्रताप सिंह]

किया जाए। हमको इस प्रकार की शिक्षा नीति निर्धारित करना है कि इसी-सर्वो भूताब्दी में प्रवेश के पूर्व समस्त नागरिकों को हिन्दी का ज्ञान हो सके। हिन्दी भारत के समस्त नेतृगण; चाहे वह कश्मीर से कन्या कुमारी तक, कामरूप से कच्छ तक सभी हमारे नेतृगण, हमारे सभी विचारक, हमारे सभी शिक्षाविद इस बात पर एकमत रहे हैं कि हिन्दी राष्ट्र की अग्रगण्यता, एकता तथा प्रभुसत्ता की दिशा में बाधक न होकर सदैव सहायक रही है। उसको उसी दृष्टिकोण से देखना होगा जिससे कि भारत विश्व के समस्त शक्तिशाली राष्ट्रों की भांति भारत को अपनी एक भाषा अपनी एक सम्पर्क भाषा, अपनी राजभाषा तथा अपनी राष्ट्र-भाषा के गौरव को प्राप्त कर सके।

7. नागरिकता की शिक्षा—कोई भी देश सभी महान देश बन सकता है जब कि उस देश के नागरिक राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य को समझे तथा उसके अनुसार आचरण करें। इसके लिए आवश्यक है कि उन्हें नागरिकता की शिक्षा प्रदान की जाए।

8. सांस्कृतिक शिक्षा—भारत की जो मूल संस्कृति है, वह वसुधैव कुटुम्बकम् की रही है। आज विश्व तथा मानवता के समक्ष जो बड़ी चुनौतियाँ हैं, उनका सामना प्रेम, एकता, सद्भावना, शांति और विश्व बांधुत्व से ही सम्भव है। जो बड़ी चुनौतियाँ हैं, उनका सामना प्रेम, एकता, सद्भावना, शांति, बांधुत्व से ही संभव है। भारत की मूल संस्कृति युग-युग से उसका संदेश देती आयी है। अतएव उसकी शिक्षा सर्वथा उपयोगी होगी। शिक्षा का स्वरूप इस प्रकार का हो, जो जाति, संप्रदाय, भाषा, धर्म, लिंग तथा रंग आदि के भेद को समाप्त करके संपूर्ण मानवता में प्रेम तथा कृपा का भाव उत्पन्न कर सके तथा मानवीय गुणों का विकास कर सके।

9. व्यावसायिक शिक्षा—आज जिस प्रकार से शिक्षित बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि हो रही है। वह मानव संसाधन मंत्रालय के रूप में वर्तमान शिक्षा नीति के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती है। अतएव मेरे सर्वोत्तम ज्ञान तथा विश्वास के अनुसार मानवीय सदन एक मत है कि नयी शिक्षा नीति में व्यावसायिक शिक्षा को समुचित स्थान प्रदान करना सर्वथा उचित होगा।

10. बालिकाओं की शिक्षा पर उनकी आवश्यकता तथा राष्ट्र की आवश्यकता के अनुसार विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। उनकी आवश्यकताओं, उनकी भावनाओं, उनकी आकांक्षाओं और राष्ट्र की आकांक्षाओं के अनुरूप उनकी शिक्षा की प्राथमिकता के आधार पर व्यवस्था की जानी चाहिए।

11. उच्च शिक्षा—उच्च शिक्षा के संबंध में भी मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। जो वितार्थी प्रतिभावान हो, उन्हें उच्च शिक्षा का अदम्य अवश्य प्रदान किया जाये, जिससे वह साहित्य, कला, विज्ञान, कृषि, टेक्नोलॉजी आदि समस्त विषयों का उच्च ज्ञान प्राप्त करके राष्ट्र की प्रगति तथा राष्ट्र के विकास में योगदान दे सके। हमको ज्ञान के नवीन क्षेत्रों की खोज करनी होगी और ज्ञान के वर्तमान क्षेत्रों में विश्व में आगे जाना होगा।

श्रीमान् राष्ट्र की आवश्यकता तथा भावात्मक एकता को दृष्टि में रखते हुए शिक्षा को केन्द्र का विषय बनाया जाना अनिवार्य है मुझे आशा है कि शिक्षा का लक्ष्य, उसका स्वरूप निर्धारित करने समक्ष मेरे विचारों की समीक्षा की जाएगी साथ ही जिन्हें हमारे योग्य माननीय मंत्री महोदय मानव संसाधन के विकास में उपयोगी पाएँगे, उनका वह शिक्षा नीति में समावेश करेंगे।

अन्त में हिन्दी की एक खूबई पढ़कर चर्चा को समाप्त करना :-

जिन्दगी पंथ है मंजिल की तरफ जाने का,
जिन्दगी गीत है मस्ती से सदा गाने का,
मौत आराम से सो जाने का वदनम है,
जिन्दगी नाम है तूफान से टकराने का।

मैं विश्वास करता हूँ कि हमारे माननीय मंत्री, हमारे माननीय राज्यमंत्री तूफान से टकरायेगे और देश को एक नयी दिशा देंगे। धन्यवाद।

श्री कल्पनाथ राय : आदरणीय उपाध्यक्ष महोदय, शिक्षा में सुधार एवम् एक सम्पूर्ण शिक्षा नीति का प्रश्न हमारे देश में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सन् 1835 में जब सबसे पहले अंग्रेजी भाषा इस देश में शिक्षा का माध्यम बनी और पाश्चात्य शिक्षा पद्धति को जब हमारे देश में स्वीकार किया गया, उसके बाद से ही राष्ट्रभक्त एवम् जागरूक, भारतीय, इस शिक्षा व्यवस्था की त्रुटियों की ओर ध्यान आकर्षित करते रहे हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती, पं० भजन मोहन मालवीय डा० भगवान दास, महात्मा गांधी, डा० जाकिर हुसैन एवं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे मनीषियों ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था को सुधारने का गंभीर प्रयास किया। सन् 1871 में जब हंटर कमिशन बना तब से लेकर अब तक डा० राधाकृष्ण, आचार्य नरेन्द्र देव लक्ष्मण स्वामी, मुदालिदार तथा डा० कोठारी के नेतृत्व में आयोजित आयोगों ने भी प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के क्षेत्रों में अनेक सुझाव दिए हैं। उनके द्वारा सुझाई गई कुछ बातें तो प्रयोग में लाई गई और कुछ नहीं भी लाई जा सकी। शिक्षा सुधार एवं नई शिक्षा नीति की दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा आयोग तथा कोठारी आयोग के प्रतिवेदन एवं 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति का स्थान हमारे राष्ट्रीय जीवन में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है।

यह अत्यन्त ही हर्ष की बात है कि अपनी मृत्यु के ठीक पूर्व हमारी भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी ने नई शिक्षा नीति पर काफी जोर दिया। उन्होंने के आग्रह पर अध्यापकों की दशा

की जांच-पड़ताल एवं सुधार के किये सन् 1983 में दो अध्यापक आयोगों का गठन हुआ।

हमारे नए एवं युवा प्रधान मंत्री श्री राजीव गांधी, जब सत्ता में आए तो उन्होंने इस बात पर काफी जोर दिया कि नई शिक्षा नीति की भारत में आवश्यकता है, शिक्षा, सामाजिक विकास एवं परिवर्तन में गहरा संबंध है, शिक्षा एवं मानवीय संसाधन एक दूसरे से गहराई से जुड़े हैं। हमारे नये प्रधान मंत्री नई शिक्षा नीति के प्रश्न पर कितने गंभीर थे, इसका पता इस बात से मिलता है कि प्रधान मंत्री बनने के तुरन्त बाद उन्होंने इस बात पर जोर दिया। हमारे दल के घोषणापत्र में भी इस बात की प्रमुखता से चर्चा हुई। चुनाव के तुरन्त बाद राष्ट्र के नाम सदेश में प्रधान मंत्री ने नई शिक्षा नीति की आवश्यकता पर पुनः बल दिया।

इसी बात को ध्यान में रखकर भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय तथा इससे संबंध विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, शैक्षणिक प्रशिक्षण एवं प्रशासन संस्थान तथा शैक्षिक अनुसंधान की राष्ट्रीय परिषद ने मिल जुलकर हमारी शिक्षा को चुनौती तथा इसके नीतिगत परिप्रेक्ष्य पर विस्तार से विचार किया। इसी विचार विमर्श का फल एक रिपोर्ट के रूप में हमारे सम्मुख आया है जिसका शीर्षक है "चैलेंज आफ एजुकेशन-ए पॉलिसी पर्सपेक्टिव"। इसके पूर्व मैं इस रिपोर्ट पर कुछ बोल, मैं कुछ मूलभूत प्रश्नों की ओर इस सदन का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा। किसी भी शिक्षा नीति पर विचार करते समय इन बातों पर ध्यान देना अनिवार्य होगा : हमारा शिक्षा नीति की कौन सी त्रुटियाँ हैं। पूर्व आयोगों ने इसका विश्लेषण किस प्रकार से किया है ? पहले के सुझावों के आधार पर हम त्रुटियों को दूर कर पाने में कहां तक सक्षम हुए हैं ? नई परिस्थितियों में शिक्षा की क्या चुनौतियाँ हैं और किस परिप्रेक्ष्य में हम इनका समाधान करना चाहते हैं ? इन चुनौतियों के अध्ययन अनुसंधान

[श्री कल्याण राय]

एवं विश्लेषण के लिए किस प्रकार के संस्थान उपलब्ध हैं? इन संस्थानों में काम करने वाले मानवीय शक्ति एवं संसाधन की बौद्धिक क्षमता, कार्य-कुशलता तथा लगन किस प्रकार की है?

इन मापदंडों के संदर्भ में जब हम नई शिक्षा नीति पर विचार करते हैं तो ऐसा लगता है कि यह अत्यन्त सतही, उथला एवं किडरगार्टन स्तर की लफ्फाजी मात्र से युक्त है। एक सौ उन्नीस पृष्ठों का यह अभिलेख चार खंडों—शिक्षा सभाज एवं विकास शैक्षणिक विकास पर एक दृष्टि, एक आलोचनात्मक मूल्यांकन एवं शैक्षिक अभिवृद्धि का एक परिप्रेक्ष्य में विभाजित है।

[उत्समापति पीठासन हुई]

शिक्षा जगत में व्याप्त व्याधि के विश्लेषण में यह रिपोर्ट केवल शब्दाडंबर के ईदीगद घूमती है। इनमें इस बात की जरा भी चर्चा नहीं है कि डा० राधाकृष्णन, आचार्य नरेन्द्र देव मुद्गलिप्य एवं डा० कोठारी के प्रायोगों के प्रतिवेदनो में कौन सी कमियां रह गई थीं जिन्हें दूर करने के लिए एका नई रिपोर्ट की आवश्यकता पड़ी। इस बात के भी विश्लेषण की भी आवश्यकता थी कि यह रिपोर्ट किन अर्थों में नए आयामों का दिग्दर्शन करवाती है।

ऐसा लगता है कि जिन लोगों ने रिपोर्ट बनाई वे न तो राष्ट्रीय आंदोलन के जमाने में विकसित होती हुई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की धारा से परिचित हैं न ता है जनताकाशाओं से, न तो सत्ताधारी दल के घोषणा पत्र से, न तो हमारे राष्ट्रीय जीवन में व्याप्त गहरी शैक्षिक बीमारी से।

मैंने मापदंडों की चर्चा करते समय समस्याओं एवं उनमें पाए जाने वाले मानवीय शक्ति एवं संसाधन की चर्चा की थी। एक और यह हमारे लिए गौरव की बात है कि हमारे प्रधान मंत्री एक साफ स्वच्छ प्रशासन की बात करते हैं, राष्ट्र को 21वीं

सदी की ओर ले जाने के लिए दृढ़-संकल्प हैं। वहीं दूसरी ओर नौकरशाही एवं शैक्षिक प्रशासकों के दल का एक छोटा सा चक्रव्यूह जो अत्यन्त निकम्मा भ्रष्ट, सड़ा हुआ कुचक्र एवं साजिश करने वाला तथा तिरुडमी है। हमारे 90 प्रतिशत से अधिक नौकरशाह विश्व-विद्यालयों के अध्यापक प्रबंधक एवं वैज्ञानिक अत्यधिक कुशल सचेत एवं कर्मठ हैं। लेकिन वे पदोन्नति तथा तिरुडमी से अलग रह कर अपने काम अध्यापन, अनुसंधान, प्रशासन तथा प्रबंध में संलग्न हैं। उनकी इस मनःस्थिति का लाभ एक छोटे से वर्ग ने मुख्य रूप से अश्वत्थमयी एवं प्रशासकीय क्षेत्र में उठाया है। इन्हीं के कारण नई शिक्षा नीति का जो ड्राफ्ट बना है वह अत्यंत पिछड़ा तथा कुत्सित है। मैं अपनी बात को स्पष्ट करना चाहूंगा। आज पूरे देश में नौ-दस केन्द्रीय विश्वविद्यालय हैं। एन०सी०ई० आर०टी० एवं एन० आई० ई० पी० ए० जैसी केन्द्रीय सरकार से सम्बद्ध स्वाशासी संस्थाएँ हैं। लेकिन पिछले 15 वर्षों के इतिहास पर ध्यान दिया जाए तो केवल पाच-सात चेहरे ऐसे दिखाई पड़ते हैं जो जे० एन० यू०, दिल्ली यूनिवर्सिटी, अलीगढ़ यूनिवर्सिटी, एन०आई०ई०पी०ए० एन० सी०ई०आर०टी० तथा अन्य विश्व-विद्यालयों की कार्यकारिणी समितियों में राजा जमाए हुए हैं। शिक्षा के क्षेत्र में जो बीमारी की स्थिति आई है, जिस दाँव-पेच एवं उठापटक के दर्शन होते हैं और जितना भ्रष्टाचार दिखाई देता है, वह इन कुछ थोड़े से लोगों पर ही है। मैं चाहता हूँ कि शिक्षा नीति के नियमन से संबंधित इन संस्थानों के क्रियाकलापों की पूरी तौर पर जांच हो।

व्यक्तियों एवं संस्थाओं पर विचार करने के बाद मैं विचारधारा एवं मूल्य का शिक्षा नीति से क्या संबंध है इस पर भी प्रकाश डालना चाहूंगा। हमारा संविधान समानता पर आधारित समाज की कल्पना करता है। हमारे दल की विचारधारा समाजवादी समाज की स्थापना पर जोर देती है। इसके उद्देश्य भी यह शिक्षा नीति जिस तरह से शिक्षा का व्यय विद्यार्थियों पर डालने, माडल स्कूलों की स्थापना एवं पब्लिक स्कूलों के प्रोत्सा-

हनु पर बल देती है यह भी एलिटिस्ट है। यह सही है कि हमें प्राथमिक शिक्षा को सर्वभौम बनाना है तथा माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के माध्यम से सक्षम एवं कुशल मानवीय संसाधन विकसित करना है लेकिन इस दस्तावेज में मानवीय संसाधन के विषय में कुछ नहीं कहा गया है इस दस्तावेज के माध्यम से प्रधान मंत्री की नीतियां भी उभर कर सम्मुख नहीं आती हैं। अतः मैं इस सदन से अप्रार्थ कलंगा कि शिक्षा नीति पर नए सिरे से विचार किया जाए।

इस सही दस्तावेज के स्थान पर हम गहराई से शिक्षा एवं समाज शिक्षा एवं सामाजिक समानता, प्रचलित शिक्षा एवं इसकी व्याधियों, इन व्याधियों को दूर करने के उपाय, शिक्षा तथा मानवीय संसाधन का विकास तथा इन सवालों पर गहराई के साथ विचार करें। देश छोटे स्वार्थी एवं छोटे गिरोहों के स्वार्थों से बहुत बड़ा है 70 करोड़ के इस देश में जहाँ 120 विश्वविद्यालय हैं, सक्षम तथा राष्ट्र-भक्त विशेषज्ञों की कमी नहीं है 6 P.M. उन के परामर्श से एक ऐसी शिक्षा नीति को तैयार करने की आवश्यकता है जो समानता एवं मानव संसाधन को विकास की ओर ले जाये। आदरणीय उरसभापति महोदय, लार्ड मैकले ने 1835 में जो शिक्षा की नीति डाली थी उसमें उसने अपने वक्तव्य में कहा था :—

We must do our best to form a class which may be an interpreter between us and the millions whom we govern, a class of persons Indian in blood and colour but English in taste and intellect.

उरसभापति महोदय, मैं माननीय शिक्षा मंत्री जी का ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि आज हिन्दुस्तान में पांच प्रकार के स्कूल हैं, पांच प्रकार की किताबें हैं, पांच प्रकार के अध्यापक हैं, पांच प्रकार की उनकी तनखाहें हैं। क्या इसी तरह हम लोकशाही और लोकतंत्र को मजबूत बना सकते हैं। हिन्दुस्तान के सात लाख गांवों में लड़कों को पढ़ाने के लिये प्राइमरी स्कूल है। उन के लिये अलग प्रकार की किताबें हैं,

उन के लिये अलग प्रकार के अध्यापक हैं, उन के लिये अलग प्रकार की तनखाहें हैं और उन के लिये अलग प्रकार के स्कूल हैं। अब चले आइये म्युनिसिपैलिटीज में। गोरखपुर म्युनिसिपैलिटी के लड़कों के लिये अलग प्रकार के स्कूल है, उन के लिये अलग प्रकार की किताबें हैं, उन के लिये अलग प्रकार के अध्यापक हैं और उन की अलग प्रकार की तनखाहें हैं। उस के बाद लखनऊ आ जाइये। लखनऊ में जिस प्रकार के स्कूल हैं, उन में अलग प्रकार की किताबें हैं, उनके अलग प्रकार के अध्यापक हैं और उन की अलग प्रकार की तनखाहें हैं और उन में पढ़ने वाले नये ढंग के लोग हैं। उस के बाद दिल्ली में पब्लिक स्कूल हैं, दून स्कूल हैं, उटी स्कूल हैं। इन स्कूलों में पढ़ने वाले अलग किसम के लोग हैं। उन की अलग प्रकार की किताबें हैं। उन के अलग प्रकार के अध्यापक हैं और उन की अलग प्रकार की तनखाहें हैं। इस तरह हिन्दुस्तान में 38 साल का आजादो के बाद भी 5 प्रकार की शिक्षा चल रही है जिस में पांच तरह का किताबें हैं, पांच तरह के अध्यापक हैं और उनका पांच तरह का तनखाहें हैं और इस तरह से पांच तरह का शिक्षा इस देश में दा जा रही है। मैं आदरणीय शिक्षा मंत्री जी से जानना चाहता हूँ कि क्या हिन्दुस्तान में लोकशाही का हम इसी तरह मजबूत बना सकते हैं और समता पर आधारित समाजवादी समाज की रचना कर सकते हैं? क्या सेम्बलरिज्म पर आधारित नये हिन्दुस्तान का हम इसी तरह बना सकते हैं? क्या हिन्दुस्तान के संविधान में, उस के प्रियेबिज में हम ने जो कसम खायी है उस के अनुरूप समाज का व्यवस्था का हम बना सकते हैं ऐसा बार के? ऐसा बार के हम किस तरह की लोकशाही को जन्म देंगे? इस पूरा शिक्षा व्यवस्था का जो एक चैलेंज है उस का हम में कितनी चर्चा है? क्या इस से गांव में वहाँ के स्कूलों में पढ़ने वाले मजदूर, गरीब के बच्चों को जहाँ कि स्कूल हैं तो अध्यापक नहीं और अगर वहाँ वही अध्यापक हैं तो स्कूल ही, हम उन का कुछ भला कर पायेंगे? क्या इस तरह हिन्दुस्तान में करोड़ों करोड़ किसानों के बच्चे जो गांवों में

[श्री कल्पनाथ राय]

पढ़ते हैं वह देहरादून कालेज में पढ़ने वाले बच्चों का मुकाबला कर सकते हैं या जो दून कालेज में ऊटी कालेज में पढ़ते हैं। उन का मुकाबला कर सकते हैं। वहाँ अलग अलग प्रकार का किताबें हैं, वहाँ अलग प्रकार के अध्यापक हैं, वहाँ न उन की अलग प्रकार की तनख़ाहें हैं, उन का अलग प्रवाण का स्टैंडर्ड आफ लिविंग है। उस के बाद जब आप जिले के हेड क्वार्टर आते हैं तो वहाँ स्पेशलिपैलिटो का स्कूल है। उस में अलग प्रकार के लड़के हैं, अलग प्रकार की पढ़ाई है। बड़े स्कूलों में तो लड़के रिकशा से जायेंगे, कार से जायेंगे, सूट पहनून पहन कर जायेंगे। उन की किताबें अलग तरह की होंगी, उनके अध्यापक अलग तरह के होंगे, उन की तनख़ाहें अलग तरह का होंगी। वह लड़के पढ़ने में गाँव के लड़कों से ज्यादा बेहतर होंगे। फिर उन से भी बेहतर स्कूल हैं राजधानियों में जो कन्वेंट स्कूल हैं वहाँ के लड़के कार से जायेंगे कार से आयेंगे उन की बेत अलग होंगी उन के अध्यापक अलग होंगे, उन का कैरिकुलम और सिलेबस अलग होगा और उन का एक विशेष प्रकार की शिक्षा हिन्दुस्तान में होगी। जो अभी ऊटा और दून कालेज हैं उन में मुट्टी भर लोगों के बच्चे पढ़ते हैं। उन को अलग प्रकार का शिक्षा है, अलग प्रकार की किताबें हैं, अलग तरह का सिलेबस है। वहाँ से अलग तरह के अच्छे निकलते हैं। तो मैं पूछना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान में 38 वर्ष का आजादी के बाद मुल्क में एक तरह की शिक्षा न हो तो हम हिन्दुस्तान में आर्थिक अस्थिरता को दूर नहीं कर सकते हैं। मैं मानता हूँ कि गरीबी और अमीरी की खाई को नहीं पाटा जा सकता लेकिन हिन्दुस्तान में एक तरह की शिक्षा हो, एक तरह की किताबें हों, एक तरह का सिलेबस हो, एक तरह के अध्यापक हों, यह तो हो ही सकता है। एक समान सिद्धांत पर आधारित नयी शिक्षा व्यवस्था की रचना यहाँ होनी चाहिए। यदि ऐसा न किया गया तो लोकशाही मजबूत नहीं हो सकती, समाजवाद पर आधारित समाज की रचना नहीं हो सकती।

आखिरी बात निवेदन करना चाहता हूँ।

मैं यह नहीं कहने आया हूँ कि हिन्दी हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय भाषा है, मगर यह बात जरूर कहने आया हूँ कि मातृ भाषा शिक्षा का माध्यम बने। जापान में जापानी, अमरीका में अंग्रेज़ी, रूस में रशियन है, मगर हिन्दुस्तान की कोई भाषा है या नहीं इस मुल्क की राष्ट्र भाषा क्या होगी? हिन्दुस्तान के संविधान बनाने वाले, आजादी की लड़ाई के स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों ने, राज-गोपालाचारी से ले कर महात्मा गांधी, नेता जी सुभाष चन्द्र बोस से ले कर हिन्दुस्तान के सारे नेताओं ने संविधान सभा में बैठ कर भारत की राष्ट्र भाषा क्या होगी इस सवाल का सर्वसम्मति से निर्णय किया था। इस में सवाल पर सर्वसम्मति निर्णय किया था लेकिन कालांतर में आजादी के बाद राजनल फोर्सेज ने, फारिस्ट फोर्सेज ने, देश को ताने वाला जनघाती राष्ट्रघाती शांकरों ने अपना सिर ऊंचा उठाया और वे डिकटेट करने लगे कि हमारी भाषा यह होगी हमारा प्रान्त अलग होगा, हमारा नीति अलग होगा। इस तरह से कोई देश नहीं बन सकता है उसके लिए एक पोलिटिकल विल चाहिए, पोलिटिकल विलप्रवर से हमारे देश में आजादी के दौरान हमारे स्वतंत्रता संग्राम के सैनिकों ने हिन्दुस्तान के लाखों करोड़ों लोगों ने महात्मा गांधी के नेतृत्व में देश की शिक्षा नीति का विकास किया था। स्वामी दयानंद सरस्वती से लेकर महात्मा गांधी तक और रवीन्द्र नाथ टैगोर से लेकर डा० जवाहर हुसैन तक सभी ने इसमें योगदान दिया। उन्होंने कहा कि इसमें राष्ट्रीयता होगी, इसमें समाजवाद होगा, इसमें लोकशाही होगी और हम आजादी की लड़ाई के इतिहास को, अतीत को समने रखकर भविष्य के सुहावने सपने का निर्माण करेंगे जिसमें भारत की एकता समाजवाद और लोकशाही को हम मजबूत बना सकेंगे। मुझे विश्वास है कि हमारे सम्माननीय आदरणीय शिक्षा मंत्री श्री नरसिंहराव जी, जो माने हुए शिक्षा-विद हैं, जिनकी आँखों में देश को बनाने का सुहावना सपना है, जिनके दिल में आजादी का तूफान है, जिनके मन में देश में एक नया समाज बनाने का सपना है जो राजीव गांधी के अग्रगण्य के अनुकूल

देश में नई शिक्षा नीति चलाने की जिम्मेदारी संभाले हुए हैं, हमें विश्वास है कि उनके नेतृत्व में वैसा शिक्षा नानि बनेगी जिसमें लोकशाही, मजबूत होगी, समाजवाद मजबूत होगा और हिमाचल से लेकर कर्नाकुमारा तक की जनता एक-समान शिक्षा प्राप्त करेगा। ऐसी शिक्षा से देश में प्राण रक्ष का संचार होगा। नया जगत्शास्त्री देश बनेगा।

इन शब्दों के साथ मैं आपकी धन्यवाद देता हूँ।

PAPER LAID ON THE TABLE—

(contd.)

Notification of the Ministry of Finance (Department of Revenue)

THE MINISTER OF STATE IN THE MINISTRY OF FINANCE (SHRI JANARDHAN POOJARI): Madam, I beg to lay on the Table, under Section 159 of the Customs Act, 1962, a copy (in English and Hindi) of the Ministry of Finance (Department of Revenue) Notification No. 359/85-Customs, dated the 19th December, 1985, amending Notification No. 153/85-Customs, dated the 24th May, 1985 so as to exempt newsprint from the whole of the auxiliary duty of customs leviable thereon together with an Explanatory Memorandum on the Notification. [Placed in Library. See No. LT-1759/85].

SHRI NIRMAL CHATTERJEE: Madam, I have a small clarification to seek. Everyday in the last one week, almost everyday, you are having one such notification. Is it part of your long-term fiscal policy to have a notification everyday?

(No reply.)

THE DEPUTY CHAIRMAN: Now we have another statement by the Minister of Chemicals.

II STATEMENT BY MINISTER

Re. non-extension of the term of the commission of inquiry appointed by the Government of Madhya Pradesh on the Bhopal Gas Leak Disaster.

THE MINISTER OF STATE IN THE DEPARTMENT OF CHEMICALS AND PETROCHEMICALS (SHRI R. K. JAICHANDRA SINGH): Madam,

Some Hon'ble Members raised the question about the non-extension of the term of the Commission of Inquiry appointed by the Madhya Pradesh Government to inquire into the Bhopal gas leakage disaster which occurred on the night intervening 2nd/3rd December, 1984. This House is aware that this Commission of Inquiry was appointed by the State Government of Madhya Pradesh on 6th Dec., 1984. The term of the Commission was initially fixed upto 15th March, 1985. This was subsequently extended upto 15th December, 1985. The term has now expired and the Government of Madhya Pradesh has not extended the term.

The State Government appears to have come to its decision of not extending the term of the Commission for the following reasons:

(i) At the instance of the Central Government, Dr. S. Varadarajan, Secretary, Department of Scientific and Industrial Research of the Govt. of India along with a team of experts of high standing numbering 16, including Dr. Varadarajan, commenced an inquiry into the causes of the Bhopal gas leakage disaster and the circumstances leading to it and other matters connected therewith. Dr. Varadarajan and his team of experts has now submitted a report to the Central Government on the causes and circumstances leading to the Bhopal gas leakage disaster and other matters connected therewith. This report has been accepted by the Central Government and will be placed on the Table of the House on the 20th December, 1985. The Government also proposes to file it in the District Court of New York where the suit filed by the Govt. of India against the Union